प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय,
मंत्री, सस्ता साहित्य मण्डल,
नई दिल्ली

पहली बार १९५३
मूल्य
चार आना

मुद्रक
नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स
देहली

प्रस्तावना

भूदान-यज्ञ आन्दोलन ज्यो-ज्यों व्यापक और गहरा होता जा रहा है, जनता में सर्वोदय साहित्य की रुचि वढ रही है और उसकी माग वहुत हो रही है। अभी तक फुटकर रूप से अलग-अलग लोगो और सस्थाओ के द्वारा ऐसे प्रकाशन होते रहे है, पर अव 'सर्व सेवा सघ' ने यह तय किया है कि ऐसा सर्वोदय और भूदान-साहित्य वह खुद सपादित और प्रकाशित करेगा ।

सर्वोदय कार्यकर्ताओ के साथ विनोवाजी की जो महत्त्वपूर्ण चर्चाए और भाषण चाडिल के सर्वोदय सम्मेलन में हुए थे, वे सव प्रस्तुत पुस्तक में सग्रहीत किये गए है। विनोवाजी के चाडिल के ता० ७ और ९ के तीन महत्त्वपूर्ण भाषण 'सर्वोदय का घोषणा-पत्र' नामक पुस्तिका मे, जो 'मण्डल' द्वारा प्रकाशित हुई है, छप चुके है। इन दोनो पुस्तको से कार्यकर्ताओ को पूरा वैचारिक मार्गदर्शन, प्रेरणा और उत्साह मिल जाता है ।

'सर्वोदय के घोषणा-पत्र' के वाद जल्दी ही यह किनाव पाठको को मिल जानी चाहिए थी और इसमें विनोवाजी के भाषण और चर्चायें होने के कारण संपादन करने के लिए वहुत वाकी नही रहना। सम्पादन-समिति को विधिवत् अपना काम शुरू करने में कुछ देर लगेगी इसलिए समिति के कुछ सदस्यो के इस पुस्तक को न देख पाने पर भी मपादन में उचित सावधानी रखकर यह प्रकाशित की जा रही है।

आशा है, सव लोग इसका अधिक-से-अधिक लाभ उठावेंगे।

सर्व सेवा सघ,
सेवाग्राम, २०-५-५३

—वल्लभस्वामी
सहमन्त्री

दो शब्द

बहुत-से रचनात्मक कार्यकर्त्ता छोटे-मोटे कामो में लगे हुए है और अपनी शक्ति भर काम करते रहे है। भूदान-यज्ञ का एक नया काम आया और उनके कामो मे एक काम की वृद्धि हो गई। इतना ही कार्यकर्त्ता अक्सर समझे थे। लेकिन अब यह बात स्पष्ट हो गई कि हमारे चालू कामो मे मे जितने काम हम समेट सकते है, उतने समेट कर भूदान-यज्ञ मे कूदना पडेगा। अनेक कामो में सिर्फ एक काम की वृद्धि नही हुई है, वल्कि अनेक कामो को उदर मे सम्भालने वाला काम उपस्थित हुआ है।

पुराने अनुभवी कार्यकर्त्ताओ की सख्या सीमित है। उनकी मदद में सैकडो नये कार्यकर्ताओ को काम करने का मौका मिलेगा। आज देश मे इस काम के लिए जो उत्साह है, उमे देखते हुए मुझे उम्मीद है कि नये कार्य-कर्त्ता पर्याप्त सख्या मे मिलेगे। उनको कुछ तालीम भी देनी होगी, जिसका इन्तजाम 'सर्व-सेवा-सघ' को करना होगा।

छठा हिस्सा जमीन प्राप्त करना भूदान-यज्ञ का सबमे छोटा अश है। प्राप्त की हुई जमीन की तकसीम भी करनी होगी। जिन्हे जमीन दी जायगी, उन्हे काम के लिए साधन-सामग्री भी दिलानी होगी। उन्हे जमीन पर स्थिर करना होगा। जिन गावो में जमीन मिलेगी, उन गावो मे खादी, ग्रामोद्योग, नई तालीम आदि के जरिये ग्रामराज्य की स्थापना करनी होगी। मुख्य अश तो आगे करने के काम का है। जहा काश्त के काबिल परती जमीन बडे टुकडो मे मिली है और मिलेगी, वहा नये सिरे से गाव का बसाना होगा और ग्राम-रचना करनी होगी। इस काम के लिए सबका सहयोग हासिल करना होगा, जन-शक्ति जाग्रत करनी होगी और सरकार से भी जो मदद मिल सके, हासिल करनी होगी। उसे अपने कर्तव्य का भान कराना होगा।

भूदान-यज्ञ और उसके आगे के काम सम्पत्ति-दान-यज्ञ के बिना पूर्ण नही हो सकते। इसलिए सम्पत्ति-दान-यज्ञ का विचार भी सामूहिक जीवन-निष्ठा के तौर पर लोगो को समझाना होगा।

यह सारा काम जितना विशाल और व्यापक है, उतना ही गहरा और ठोस है। इसीका नाम सर्वोदय है। भूमि इसका अधिष्ठान है। सेवक-गण कर्त्ता है। सम्पत्ति-दान-यज्ञ करण है। अन्न-वस्त्र-स्वावलबन आदि इसमें करने की विविध क्रियायें है और लोक-मानस अनुकूल बनाना ही इसका देवता है। मै आशा करता हू कि सर्वोदय-प्रेमी सब भाई-बहन अपनी पूरी शक्ति एकसाथ इसमे लगायगे और इस विराट यज्ञ को सफल बनायगे।

—विनोबा

विषय-सूची

१

सर्वोदय के सेवकों से

गीता कहती है कि कर्मयोग का आरम्भ ही बुद्धि के निश्चय के बिना नही हो सकता। सूर्य के अस्त के बाद असख्य तारिकाए प्रकाशित होती है और उनका अपना-अपना अलग प्रकाश होता है। वैसे ही गाधीजी के जाने के बाद लोगो ने किया, यह ठीक ही है, इसमें किसी को दोष देने की जरूरत नही है, लेकिन अब इतने से हमारा काम नही होने वाला है।

जब बम्बई मे सरकारी सर्वोदय-योजना शुरू हुई, तो उसके पहले कुछ लोग, जो कि इस योजना मे शरीक होना चाहते थे, मुझसे मिलने आए थे। आज के जो मेरे विचार है, वे बहुत पुराने है। मैने उसी समय उनसे कहा था कि अगर दूसरा कुछ भी नही बन सकता है, तभी इस काम में पडो। पर हमारे लिए वह एक मोह-जाल है। असली चीज जो हमें करनी है, हम नही कर रहे है। आज काग्रेस की सत्ता है, पर अगर कल दूसरे किसी पक्ष को सत्ता हो जाय, यहा तक कि कम्यूनिस्टो की भी सत्ता आये, तो भी हर सरकार आप जैसे लोगो को थोडी-बहुत मदद चाहेगी। कम्यूनिस्ट सरकार भी खादी को कुछ थोडी मदद देगी, क्योकि इस तरह के पुण्य का आधार हर सरकार चाहती है। आज की हमारी सरकार इतनी बुरी भी नही है कि हम उससे असहयोग करें। परन्तु उससे सहयोग करके मुक्त रहना, उसमे बध न जाना, यह हमे करना होगा। रामदासस्वामी ने कहा कि 'परस्परेची उभारावे भक्ति-मार्गाशी'—कोई भी जिम्मेदारी अपने ऊपर मत लो। सब लोगो के सहयोग से करो। रामदास ने यह भक्तिमार्ग के लिए कहा था। जहा आसक्ति और मोह से बध जाने का मौका सबसे कम है, ऐसे भक्ति-मार्ग मे भी जब यह कहना पडता है, तो जिस कर्म-मार्ग

में वैसा मोह अधिक है, वहा तो सोच-विचार करके ही काम करना चाहिए।

अपनी सरकार को जरूर मदद पहुचानी चाहिए, लेकिन जो कोई दूसरा काम नही कर पाते है, वे ही वहा जाय। इसमें कोई ऊच-नीच का भाव नही है। लेकिन मेरी तो सलाह यह है कि अगर हिम्मत करो, इन मोहो को दूर रखो, तो अच्छा होगा। योग के मार्ग की उपासना में बाधक विद्या आती है, विघ्न आते है। वे आक्रमण नही करते, पर मोहित करते है, ताकि हम मुक्ति-मार्ग से हट जाय, उनमे बध जाय। समाज मे भी कुछ अच्छा काम तो चलता ही है, परन्तु दूरदृष्टि नही होती। लोग उसीमें फसते है, सरकार वाले दूरदृष्टि वाले नही होते। अगर वैसे होते, तो वे सोचते कि हमारे जैसे लोगो के बाहर रहने में ही उनके लिए अच्छा है।

अनुष्ठान के लिए संगठित शक्ति

आज काग्रेस के लोगो से सम्पर्क रखने के लिए उत्तम पुरुष नही मिलते, जैसे कि आज की तालीम में बच्चो को पढाने के लिए सबसे कम ज्ञानवान शिक्षक ही दिये जाते है, जिनका कि चरित्र भी कम हो और जो कम तनख्वाह मे ही निभ जाते हो। इस तरह राष्ट्र की जो सम्पत्ति याने बच्चे है, उनकी दृष्टि में कोई महत्व नही रखते। इसी तरह आज काग्रेस के सब अच्छे लोग सरकार मे चले गये है। वे जनता के पास बहुत कम जाते है और जाते है तो क्या वे ऐसे स्पर्शमणि (पारस) होते है कि उनके स्पर्शमात्र से जनता सोना बने? उलटे जनता का रग उनपर चढता है, उनका जनता पर नही। वे खुद को सेवक कहलाते है, तो इतने सारे जो किसान है, वे सेवा ही तो करते है। ट्रेन को लाल-हरी झडी बतानेवाला भी तो सेवा ही करता है। पर वह ऐसी सेवा नही करता, जो समाज की रचना में ही परिवर्तन ला सके। शेरनी ने सियार से कहा कि "शूरोऽसि, कृतविद्योऽसि, धन्योऽसि यस्मिन् कुले त्वमुत्पन्नो गजस्तत्र न हन्यते"—तू शूर, धन्य और विद्वान है, पर जिस कुल में हाथी का शिकार होता है, उस कुल मे तू नही पैदा हुआ है। इसमे तेरा कोई दोष नही है। हम लोग मामूली सेवा-कार्य करके

सतुष्ट रह जाय, इससे कुछ होनेवाला नही है।

मुझे ऐसे कई वेदान्ती मिलते है, जो सतुष्ट है, खाते-पीते है, सभी तो चलता है। पुरुषार्थ की शून्यता को मोक्ष कहा जाय तो वे मुक्त ही होते है। वे ढोगी नही है, पर अल्प कल्पना कर लेते है और कहते है कि हमे भगवान् का दर्शन हो गया है। बाकी सारे व्यवहार हो रहे है, लेकिन और कुछ करने की प्रेरणा उन्हे नही होती है, क्योकि उन्हे भगवान् का दर्शन हुआ है। यह तो ढोग है। ऐसे जीवो को असमाधानी बनाना भी एक पुरुषार्थ है।

अगर हम इस मामूली सेवा-कार्य में लगेंगे तो चन्द दिनो में हमारी ओर कोई ध्यान नही देगा। लोग हमें पिछडे हुए समझेंगे, इसलिए आज हमे मौका है, तो हमें जाग जाना चाहिए। जब कोई बडा पत्थर उठाना होता है, तो एक-दो-तीन कहकर एकसाथ अगर सब लोग जोर लगाते है, तो ही वह पत्थर हटता है। एक के बाद एक ताकत लगाई तो ताकत उतनी ही लगेगी, पर पत्थर नही हटेगा। यह भूदान का एक बडा काम है। हमे थोडी-सी जमीन ही हासिल नही करनी है। जहा आपके मन में निश्चित मुद्दत में सारी समाज-रचना बदलने की बात है, ग ाव को मालिक बनाने की बात है, यह आपका उसूल है, तो उसके लिए आप आयोजन करते है। वह इसी समय होगा। आज नही, फिर करेगे, ऐसा करने से कुछ नही होगा।

भगवान् ने कहा है कि "सर्व धर्मान् परित्यज्य मामेक शरण व्रज"— सब धर्मो को छोडकर मेरे पास आओ। आज हिन्दुस्तान में भगवान् की पूजा क्या कम चलती है? पर वह पूजा दिन मे आध घटे चलती है और बाकी के साढे तेईस घटे दूसरे काम चलते है, जो उस पूजा के विरुद्ध होते है। जब सुबह उठते है तो थोडा-बहुत सत्त्वगुण चलता है। फिर भूख लगने पर रजोगुण और भोजन के बाद तमोगुण चलता है। थोडा सत्त्वगुण और फिर दूसरे गुण होने पर भी ऐसा मन मे सन्तोष मान लिया कि हमने मेल बैठा लिया तो कैसे होगा? इसी तरह विनोबा के काम को दस-पाच दिन दिये तो कुछ तो मदद मिलती है। परतु हम जो चाहते है, वह नही होगा। अगर हम सिर्फ गरीबों को थोडी मदद देना चाहते है, यही हमारा उद्देश्य है, तो हमें नमूने के तौर

पर कही थोडा काम कर लेना चाहिए।

मै आग लगाना जानता हू। सारी वस्ती में प्लेग हो तो सारे गाव को आग लगानी ही होगी। पहले उसको जलाकर खाक करेंगे और फिर वाद में मकान वनायेंगे। जिस गाव में आग लगानी है, उसी गाव में थोडी आग लगाकर एक मकान वाधना शुरू करना गलत है। हमें पहले जमीन का पूरा कोटा हासिल कर लेना चाहिए। थोडा-सा काम करने से यह नही होगा। यह सवका काम है। इस काम को हम इस ढग से करेंगे कि हरेक को यह महसूस हो कि उसके वगैर चारा नही है। यह हम कर सकते हैं। अभी तक हमने वहुत काम किया है, परतु अव अपना वहुत सारा काम समेट कर इसमें कूद पडो। अव लोगो का मानस तैयार है। लोग तैयार है, पर हम तैयार नही हैं। ऐसा लगता है कि उलटा हुआ है। उलटा नही हुआ है। जो असली वात है, वही प्रकट हुई है। हम ही गाफिल थे और हम अपनी गफलत का आरोप लोगो पर लगाते थे। विहार में हवा वन गई है। मैंने सुना है कि कही-कही जमीन की विक्री वन्द हुई और जमीन खरीदने वाले भी नही मिलते है। लोग कहते है कि अव तो हमें जमीन मिलनेवाली है तो खरीद कर क्या करेंगे। इसीलिए अव इस साल गये साल के जैसा काम नही चलेगा।

घोषणाएं नहीं, कर्म

हम घोषणाए तो वडी-वडी करते है कि यह काम ऐसा है कि जो इतिहास मे नही हुआ, आदि-आदि, परन्तु हम उसे यदि पूरा नही करते है, तो वह वडा हास्यास्पद होगा और हिन्दुस्तान के लिए यह वात खतरनाक होगी। फिर तो प्रतिक्रियावादी शक्तिया देश मे आयेंगी। लोग कहेंगे कि आपकी पद्धति मे काम नही हुआ, तो अव हम दूसरी पद्धति आजमायगे। इसलिए अगर हम काम न करें, तो आज हिन्दुस्तान की जो आशा है, उससे भिन्न दिशा में भी हिंदुस्तान जा सकता है।

क्रिया से वढकर क्रिया का क्रम महत्व का है। जव जनता में ऐसी शक्ति

आयेगी कि वह खुद होकर यह काम उठायेगी तभी हम सहयोग की बात कर सकते है। आज बीच में अन्य मैनेजमेंट (व्यवस्थापक) रखेंगे तो जनता में शकाशीलता आयेगी, क्योकि आजतक बिना मतलब के कोई भी उसके पास नही पहुचा है और हम ही वैसे पहुच रहे है, ऐसा उसको विश्वास होना चाहिए। चीन में पहले जमीन गरीबो मे बाट दी गई। उससे लोगो मे विश्वास पैदा हुआ। पहले से ही सहयोग की शर्त लगाओ तो काम नही होगा।

सरकार के लॉ-आर्डर का काम

भूदान-यज्ञ का आरम्भ तो हुआ है सामूहिक माग से, परन्तु मुझे लगा कि सामूहिक खेती की शर्त लगाने में खतरा है। अगर ऐसा होगा तो दाता लोग इसीलिए जमीन देने को राजी होगे कि मैनेजमेंट के रूप में मजदूरो पर उनका अकुश रहेगा। यहा भी कुछ मुझसे कह रहे थे कि हम अपने ही मजदूरो मे जमीन बाटना चाहते है। लेकिन इसके पीछे वह दृष्टि थी। इन दिनो मजदूरो पर ऐसी सत्ता रखना छोटी बात नही है, क्योकि मजदूर अब समझ गये है। इसलिए दूरदृष्टि वाले सोचते है कि मतलब से खैरात करो। लेकिन इस तरह मजदूरो को थोडी जमीन देकर उनपर सत्ता चलाना गलत है। इसलिए इस समय हमे सिर्फ जमीन प्राप्त करना ही मुख्य काम करना होगा। आप सरकार की फिक्र क्यो करते हो? आखिर मैं सरकार का ही तो 'लॉ एण्ड आर्डर' का काम कर रहा हू। इसलिए उनका 'लॉ एण्ड आर्डर' पर जो खर्चा होता है, वह सब मुझे मिलना चाहिए। उत्तर प्रदेश मे मैंने एक जिलाधीश से यह बात की थी, तो उसने कबूल किया कि आपके काम से यहाँ शाति रहती है। इसलिए वितरण के काम का सरकार को भी सोचना होगा।

संस्थाओं की कसौटी

हम तो मिट्टी बहाना चाहते है, पानी की तरह। हम चाहते हैं कि मिट्टी बहे तो सही, फिर वह कही भी जाय, परवाह नही। हम अपनी शक्ति के

अनुसार उसका इन्तजाम करेंगे। पीलीभीत मे हमे जो जमीन मिली है उसमे हम शरणार्थियो को बसानेवाले है। इसलिए सरकार का उस खाते पर जो खर्चा होता है, उससे हम मदद माग सकते है और अपने तरीको से शरणार्थियो को बसा सकते है। इसमे हम श्री टडनजी की योजना अमल में लायेगे। ऐसे गाव के कामो मे चरखा-सघ और तालीमी सघ की जैसी सस्थाओ को फौरन लगना चाहिए, अन्यथा वे सस्थाए किसलिए है? यह भी कोई आपका धधा है कि आप दूसरे कामो में व्यस्त हो और जो काम करना चाहिए उसके लिए आपके पास समय न हो?

बापू ने मुझे १९४० में बुलाया था और पूछा था, "तू व्यक्तिगत सत्याग्रह के लिए तैयार है या नही? तुझे बहुत काम है। क्या तुझे समय मिलेगा?" मैंने कहा, "मुझे समय तो नही है, परन्तु मै मुक्त हू। कोई भी काम मुझे बाध नही सकता है।" आज भी मै वही कर रहा हू और अगर बुरी भाषा में कहू तो मै "ऐस्केपिस्ट" हू—मै भाग जाना चाहता हू। कही आग लगी है, तो उससे भाग जाना ही अच्छा है। इसलिए मैंने कहा कि मै मुक्त हू। अगर उस समय मै कहता कि मुझे काम है तो क्या होता, आप जरा सोचिए? मुख्य-मुख्य मनुष्यो को तो चक्र का या यत्र का हिस्सा नही बनाना चाहिए। अगर ये भिन्न-भिन्न सघो वाले हमसे कहेगे कि हम काम में व्यस्त है तो ऐसा कहना होगा कि 'वेट एण्ड फाउण्ड वाटिंग'—"तौलने पर पता चला कि पूरा वजन नही है।" ऐन मौके पर हम खरे न उतरे तो आजतक हमने जो काम किया है, उसकी कीमत कम होगी।

जब हम लडाई के लिए सिपाही चाहते है तो सबसे कहते है कि आओ। परतु जो गोला-बारूद या शस्त्र बनाने का काम करते है, उनसे आने के लिए नही कहते, क्योकि वे तो हमारी लडाई के ही हिस्से है। इसलिए उनको वहा से नही हटाना चाहिए। हम सस्थाओ से भी मनुष्य को चाहते है, पर ऐसे मनुष्य नही, जिनके हटने से सस्था गिर जाय। वे अगर सस्था छोडेगे तो वह अदूरदर्शिता होगी। लेकिन अगर सस्था के सचालको को कुछ मोह है और वे आसक्ति से कहते है कि सस्था छोडकर मत जाओ तो यह गलत है।

संपत्ति-दान

हमें यह वता देना चाहिए कि जिस तरह भूदान-यज्ञ चला, उसी तरह संपत्ति-दान भी चलेगा। उससे वेजमीन को और मदद मिलेगी। वेजमीन को जिस मदद की जरूरत है, वह उस-उस गाव में हासिल करनी है और इसके अलावा शहरो से भी हासिल करनी है। शहरो ने आज तक भर-भर के पाया है। इसलिए अव उनको देना चाहिए। पहला रास्ता यह है कि शहर वाले ग्रामोद्योग की चीजें खरीदें। आज तो उलटा हो रहा है। पर हमें वह करना है। दूसरा मार्ग है, सपत्ति-दान।

जहा हमे वीच की एजेन्सी खडी करनी है, वहा वह शुद्ध होनी चाहिए। 'तुकाराम' के हाथ में दूकान सौंपी तो खतरा है और होशियार को सौंपे तो भी खतरा है। इसलिए हमें ऐसा तुकाराम ढूढना चाहिए, जो भगवत्-भक्ति भी रखता हो। व्यवहार-कुशल भी हो।

एक-एक जमाना होता है। श्रावस्ती में वुद्ध भगवान् के लिए मोहरे विछा कर जमीन लेनी पडी और वही पर मेरे जैसे तुच्छ व्यक्ति को सौ एकड़ जमीन मिली। आज का जमाना कौरव-पाण्डवो का जमाना नही है। वे वडे थे; पर भीष्म, द्रोण भी जवाव नही दे सके कि द्रौपदी पर किसका हक है। आज तो कोई वच्चा भी यह वता देगा कि आज जमाना वदला है। नदी के प्रवाह के साथ हम तैरते हैं तो अपनी ही ताकत से नही तैरते, वल्कि प्रवाह की ताकत से भी तैरते हैं। आज काल-प्रवाह हमारे अनुकूल है। सत की वात प्रवाह के अनुकूल होती है तभी लोग उसे मानते हैं, नही तो सिर्फ सुनते हैं। हम गरीवो से इसलिए जमीन लेते हैं कि हमें सेना तैयार करनी है। उस सेना को विना लडे ही यश मिलेगा। "हुंकारेणैव धनुष."—'धनुष के हुकार से ही' शत्रु खत्म हो जायगे। तीर छोड़ने की जरूरत नही रहेगी।

गंगा से यमुना छोटी तो होती है, पर वह गंगा में मिलती है। वैसे ही आज सम्पत्ति-दान-यज्ञ यमुना है। पैसा उत्पादन का अनिवार्य साधन नही है, जैसे जमीन है। पैसा तो मोहमय साधन है। पैसे की कोईकीमत नही है।

वह तो नासिक के प्रेस में पैदा होता है। लेकिन जमीन को कोई प्रेस नही पैदा करता है। इसलिए पैसे की तुलना हम जमीन से नही कर सकते। पैसे वालो का पैसा हम बेकार साबित कर सकते है। जमीन के हिसाब से सम्पत्ति बहुत गौण है। जमीन बुनियादी है। यही सोच करके हमने जमीन का मसला हाथ में लिया। सम्पत्ति-दान-यज्ञ पर मै इस समय इसलिए जोर नही दे रहा हू कि वह ऐसा पौधा है, जो जल्दी उगेगा तो जल्दी सूख भी जायगा। एक कम्यूनिस्ट ने टीका की थी कि बाबा को न जमीन चाहिए, न सम्पत्ति, उन्हे तो कागज़, वचन-पत्र चाहिए। यह टीका सही है। हम लोग जहा सपत्ति-दान का सोचते है, वहा हमारी नजर सबसे पहले कुबेर की तरफ जाती है। बीच की सीढिया हम भूल जाते है। हमें तो सबसे लेना है। कोई भी धर्म-कार्य सिर्फ कुछ व्यक्तियो को ही नही लागू होता है। धर्म-कार्य तो सबके लिए होता है। लेकिन मै चाहता हू कि जो सम्पत्ति-दान देगा, वह पक्का रहेगा।

दक्षिण भारत के कार्यकर्ताओ से

आज आपने सुना है कि गया से अड़तालीस हजार एकड़ जमीन मिली और साढे नौ हजार लोगो ने दान दिया। इसका मतलब यह है कि बिल्कुल छोटे-छोटे लोगो के पास कार्यकर्ता पहुचे है और फिर भी वे कार्यकर्ता गया के एक-चौथाई गावो मे भी न जासके है। तीन-चौथाई गावो तक अभी पहुचना ही है। गया में तीन लाख मिले तो कहना होगा कि वहा पर बिना कानून के भूमि का बटवारा हुआ। इसीलिए जयप्रकाशजी ने कहा कि यह क्रान्ति का आन्दोलन है। जयप्रकाशजी ने कहा कि अगर हम गया में यह काम कर सकें तो फिर हिंदुस्तान के दूसरे सब जिलो में यह काम हो सकता है। फिर तो सिर्फ काम करने की ही बात रही।

हमारा राज हमारे हाथ में

पाच पाण्डव एक थे, इसलिए उनकी जीत हुई। तेलगाना मे हमने भूदान की जो समिति बनाई, उसमें एकाध काम नही करता है, तो एकाध असन्तुष्ट है। उधर कोई शिकायत करता है, तो एकाध ही बटवारे

का काम करता है और एकाध प्राप्ति का। इसी तरह होगा, तो क्या हम रचनात्मक काम करनेवाले दुनिया मे टिकनेवाले है ? मै प्रोपैगेण्डिस्ट (पेशेवर प्रचारक) नही हू। मैने रचनात्मक काम मे ही जिन्दगी बिताई है, इसलिए मै उसकी कीमत जानता हू। फिर भी मै कहता हू कि आज मेहरवानी करके वे सारे काम एक साल के लिए मुल्तवी रखो। फिर आगे आपको पेट भर समय मिलेगा, रचनात्मक काम करने के लिए हमे गाव-के-गाव मिल रहे है। अब वहा पर सब काम करना होगा। अगर हम लोगो से यह वायदा करेगे कि सारा गाव दे दो तो वहा हम रचनात्मक काम भी करेगे। तब कई गाव मिलेगे और फिर रचनात्मक काम करने का बहुत मौका भी मिलेगा। परन्तु आज इस भूदान के काम में आप सब लोग एक ही समय जोर लगायगे तो यह काम होगा। यह मै भूदान-यज्ञ के हित मे ही नही कहता हू, बल्कि सारे रचनात्मक कामो के हित मे कहता हू कि काम के टुकडे-टुकडे मत होने दो। अपनी-अपनी जिम्मेदारिया होती है, परन्तु उनको जहा तक हो सके, कम करके अपनी सारी शक्ति और बुद्धि भू-दान मे लगाओ। तभी यह पहाड उठेगा और फिर हम इस गोवर्धन की छाया मे सारे काम कर सकेगे। फिर तो राज ही हमारा होगा।

आसक्ति छोड़िये

तेलगाना मे क्या हुआ ? हम गये तो काम हुआ, उसके बाद फिर से बन्द ! फिर शकरराव गये, तो काम हुआ और फिर से बन्द ! यह देखकर आश्चर्य होता है कि हमारी जो बुद्धिहीनता है, वह कितनी गहरी है और सार्वजनिक सस्थाओ की हममें कितनी आसक्ति है। मै कहता हू कि और सब काम छोड कर इस काम मे आओ। जैसे समुद्र-स्नान से सब नदियो के स्नान का पुण्य मिलता है, वैसे ही भूदान के काम मे सब काम होनेवाला है। इसलिए आप सब इसमे आवे। आखिर मनुष्य सब छोडकर चला ही तो जाता है, और बिना नोटिस के चला जाता है, बेजिम्मेदारी के साथ चला जाता है। इसलिए हममे वह शक्ति होनी चाहिए कि जब एक काम के लिए दूसरा काम छोडना

होना है, तब उसे छोड सके। इसी को त्याग कहते है। परित्याग की यह शक्ति हममें होनी चाहिए, अन्यथा आसक्ति रहेगी। आखिर आप क्या काम करते है ? जहा काम करते हो, वहा दस-पद्रह चरखे चलते होगे, दो-चार गज कपडा वनता होगा, दस-पाच गायें अच्छी होती होगी और दो-चार पेड वढते होगे। इससे क्या फायदा होनेवाला है ? ये सब वेकार की वातें है। इसमे तो कुछ न करना ही अच्छा है। वहा बैठकर आप सूत कातते हो, तो किस घर में आप है, इसका चिडिया तक को पता नही होता है। इस तरह कैसे चलेगा ? गाधीजी के वाद पाच साल में हमने कुल मिलाकर क्या किया ? जरा सोचो तो ? कुछ है सतोप आपके दिल को ?

काग्रेस मे आज जन-शक्ति नही है। ईर्ष्या भी है और वोगस मेम्बरशिप भी चलती है। यदि आप चाहते है कि लोग आपके पीछे आवें तो स्वतत्र मार्ग अपनाओ। आज तो किसी को अपने रचनात्मक काम की आसक्ति, किसी को काग्रेस की आसक्ति, किसी को गाय की आसक्ति और किसी को वैल की आसक्ति है। और उस गाय-वैल के काम को भी ये लोग सार्वजनिक काम कहते हैं। इस तरह वुद्धि की जो जडता है, उसको छोडना होगा।

दूसरी एक वात है। आप चाहते है कि कोई वडा नेता आयेगा, तभी काम होगा। ऐसी इच्छा मेढको को भी एक वार हुई थी। उन्होने परमेश्वर से कहा कि हमें राजा चाहिए। फिर परमेश्वर ने एक पत्थर फेंका, जिसके नीचे दवकर सारे मर गये। इसलिए आप लोग नेता की जो माग करते है, उसमें कोई सार नही है। यह नया-नया काम है, इसलिए नये लोग चाहिए। वडो का आशीर्वाद इस काम को मिला है, यही वस है। काग्रेस ने प्रस्ताव किया है और उससे काग्रेस का आशीर्वाद मिला है, यही काफी है। आखिर नेता क्या है ? जो काम करता है, वही आगे चलकर नेता वनता है। कोई जन्म से तो नेता नही होता है। इसलिए हम सव छोटे है, ऐसा ख्याल छोड दो। सम्मिलित होकर काम करो। धीरे-धीरे वल वढेगा तो फिर सारी दुनिया मदद म आयगी। यह दुनिया ऐसी है कि जिसमें निर्वल की कोई मदद नही करता, इसलिए पहले वल वढ़ाओ।

कुछ लोग तो मेरी ही आशा करते है। कहते है कि विनोवा के आने पर काम होगा। लेकिन अव तो हम विहार मे गिरफ्तार हो गये है। हमारा काम करने का एक ढग है। पहले व्यापक प्रचार करना था, इसलिए इधर-उधर घूम लिया और कही दस हजार और वीस हजार, ऐसी जमीन प्राप्त करते हुए तीन-चार लाख एकड जमीन प्राप्त की। उससे हवा फैल गई, लेकिन अगर आज मै उसी तरह काम करता चला जाऊँ तो पाच-छ साल लगेगे और उसमे भी कुल पद्रह-वीस लाख एकड जमीन ही मिलेगी। पर आखिर इतने से क्या होगा? हमें तो पाच करोड एकड हासिल करना है। उससे कम अव मै नही वोलूगा। लेकिन कही पर गहरा भी जाना पडता है, इसलिए मैने विहार चुना है, और विहार मे भी गया जिला चुना है।

मैने आपको तीन वातें वताई — १ आप अपना पूरा समय भूदान मे दे दो। २. नेता की आशा मत करो। ३ मै यहा जो विहार मे अधिक समय रहने वाला हू, उससे आप कुछ भी खोते नही, वल्कि वहुत पाते है।

(प्रश्न. विहार राज्य का मामला हल होने पर भी वाकी राज्यो का काम तो वाकी ही रहेगा। तव उसके लिए क्या करना होगा?)

यह हालत असह्य

विहार राज्य का मसला हल होने पर भी दूसरे राज्यो के लोग चुप वैठेगे, यह सोचना ही गलत है। या तो वहा की सरकार कानून करेगी, नही तो कार्यकर्त्ता लोग काम करेगे और नही तो वहा के लोग वलवा करेगे। वहा रक्त-रजित राज्य-क्रान्ति होगी। अगर वैसी क्रान्ति हुई तो मै उससे सुखी ही होऊगा। आज की हालत असह्य हुई, और इसलिए वहा क्रान्ति हुई तो उसे रोकने वाला मै कौन हू। आज की हालत मै किसी भी हालत मे सहन करने को तैयार नही हू।

दुनिया की आज की हालत ऐसी है कि दुनिया के किसी एक कोने मे भी कुछ हुआ तो दुनिया भर मे वह वात फैलती है। जहा काश्मीर का राजा खत्म हुआ, वहा सव राजाओ की गद्दी हिलने लगती है। जहा आन्ध्र

स्टेट वना, वहा सारे देश पर उसका असर होगा। अव पुराने जमाने के जैसी हालत नही रही। अव तो एक का असर दूसरे पर हुए वगैर नही रहेगा और अगर हमारी यहा की सेना को यश मिला तो फिर वही सेना वाहर जायगी। वह तो ऐसी सेना होगी, जिसे विजय मिलेगी ही।

इसलिए आप लोग प्रान्त भर में सर्वसामान्य वातावरण तैयार करो। फिर 'स्ट्रेटेजिक प्वाइन्ट' का सवाल आता है। वैसा प्वाइन्ट चुनकर लोगो ने जहा उसपर हमला किया कि सारा प्रान्त हिलेगा, वैसे ही मैंने गया चुना है। गया वुद्ध भगवान् की भूमि है। वहा सारे हिन्दुस्तान के लोग श्राद्ध करने के लिए आते हैं। फिर वहा काग्रेस के अलावा समाजवादियो की भी कुछ ताकत है और वह विहार का वीच का जिला है। इसलिए मैंने गया चुना है।

गांधी की सूर्य-शक्ति

तामिलनाड के लोग क्या कम पराक्रमी हैं ? उनके पास तो दो हजार साल का साहित्य पडा है। उनको सिखाने लायक हमारे पास कुछ भी नही है। उनके वडे-वडे चार साम्राज्य चले। अशोक की सारे हिन्दुस्तान पर सत्ता थी, परतु वह उनपर नही चली। वे आज वहुत कर सकते हैं। परतु उसके लिए सस्था को फेंकने की, तोडने की शक्ति चाहिए। गाधीजी में वह शक्ति थी। वे वडी-वडी सस्थाए खडी करते थे और तोड देते थे। सावरमती-आश्रम खडा किया, गाधी-सेवा-सघ जैसी वडी सस्था खडी की, लेकिन एक क्षण में सव तोड डाला और वहा के सव आश्रमवासी वाहर काम के लिए निकले। गाधी-सेवा-सघ तो उतनी वडी सस्था वनी कि लोगो का यह ख्याल हुआ कि वह काग्रेस मे स्पर्धा करने लगी है। पर उन्होने वह भी खत्म की। वर्धा छोडकर वे जव गये तो हमेशा के लिए गये। अगर वे रहते तो भी वहा वापस नही आने वाले थे।

वेदो में सूय की महिमा वताई है। सारी किरणे फैली होने पर भी

वह एक क्षण मे सबको खीच लेता है। खीचने की यह कितनी महान् शक्ति उसमे है। ऐसी ही शक्ति गाधीजी मे थी। बारडोली का महान् आन्दोलन एक क्षण में उन्होने बन्द किया। तब सारे हिन्दुस्तान भर में उसपर टीका हुई, पर उन्होने उसकी परवाह नही की।

अगर पेड लगाया तो पेड को पानी देने के लिए क्या हमको पेड बनना चाहिए? अगर हम उसके लिए स्थिर बनना पडता है, और इस तरह हम आसक्त बनते है, तो कैसे काम होगा? आज तो सस्था बनी, तो इसका मतलब होता है कि हम 'फमीले' बने। इस काम मे अधिक समय देना जरूरी है, इस तरह क्या तौल कर चलते हो? एक क्षण में सस्थाओ को फेंक दो। सारा राज्य आपकी इच्छा के अनुसार चलेगा, तो सारी सस्थाए आपकी बनी है। जब सारी स्टेट हमारे रग की होगी तो घर-घर चरखे चलेगे। आज भी हमारे ही भाई वहा पर बैठे है, जिनके हाथ मे सरकार है, परन्तु हमारे विचार के मुताबिक काम करना उनसे नही होता है। वे चरखे को कुछ उत्तेजन तो देते है, पर मिलें बन्द नही कर सकते।

राजाजी ने बुनकरो के लिए जो माग की थी वह शासन के दृष्टिकोण से की थी, लेकिन उसके लिए भी उनको कितना लडना पडा? उन्होने पहले कट्रोल उठाया। उससे लोगो मे कुछ विश्वास उत्पन्न हुआ। मद्रास में दूसरी महत्व की जमात बुनकरो की है। वहा पर दस मे से एक बुनकर है। उसको काम नही मिल रहा है, इसलिए राजाजी ने वह बात उठाई। एक बार उन्होने कहा था कि अगर मेरा जीवन-चरित्र लिखना है, तो इतना ही लिखो कि इसने कंट्रोल उठाया! यह राज-कारोबार चलाने की कुशलता है। वहा पर राजाजी के कारण बुनकरो का कुछ बना। परन्तु सरकार इससे अधिक नही कर सकती है। लेकिन आपको तो सारा हिंदुस्तान खादीमय बनाना है। आप चाहते है कि कोई भी भगी न हो, सब लोग भगी का काम करे, देश मे सेना न हो तो। यह सारा करने के लिए जन-शक्ति चाहिए।

गांधी-निधि पर निर्भरता न हो

गाधीजी के नाम पर एक फड इकट्ठा किया गया। वह एक प्रकार से

गाधीजी की श्राद्धनिधि है और शास्त्रो ने कहा है कि श्राद्धान्न मत खाओ। तो क्या उसी निधि के आधार पर हम अपनी सस्थाए खडी करें? हम सरकार का ही पैसा लेकर अपशकुन करना नही चाहते। कम्युनिटी प्रोजेक्ट मे अमेरिका से मदद लेकर अपशकुन किया है। और मदद ली भी तो कितनी? बीस प्रतिशत! मैने कहा, इससे तो बेहतर यह होता कि बीस प्रतिशत प्रोजेक्ट ही कम कर देते। मदद लो, पर देहात के काम के लिए नही लेनी चाहिए। मेहमान को हम बाहर बिठाते है, रसोई-घर में नही ले जाते है। हैदराबाद मे इस काम का आरम्भ हो था, इसलिए मैने सरकार से मदद ली। परन्तु उत्तर प्रदेश में सरकार से मदद नही मागी। गाधी-निधि से मदद मागने का हमें हर हालत में हक है, क्योकि वह पैसा वहा पडा ही है। परन्तु वह पैसा न मिले तो भी हमारा काम चलेगा, इस दृष्टि से मैने उत्तर प्रदेश मे मुआवजे का भी दान मागा। अगर बटवारे के लिए कही से भी पैसा नही आया तो इस मुआवजे के पैसे से हम बटवारा करेंगे, ऐसी योजना मैने कर रखी थी, जिससे कि बाहर से कुछ भी मदद न मिले, तो भी हम अपने पैरो पर खडे रह सकें। उसके बाद मावलकरजी का मेरे पास पत्र आया ओर मैने जवाब दिया कि भूदान में मदद देना गाधी-निधि के लिए शोभादायक है, इसमे उसकी इज्जत बढती है। फिर उन्होने पैसा मजूर किया। पर हम गाधी-निधि के आधार पर ही अपनी सस्थाए चलाते है तो वे सस्थाए निर्जीव बनती है।

तेलंगाना का कार्य

तेलगाना के लिए मै कहता हू कि आज मै वहा जाऊ तो एक महीने में दस लाख एकड ला सकूगा। वहा वातावरण बिलकुल तैयार है। एक साधारण रसोई बनानेवाली स्त्री को भी अक्ल है कि रोटी बनानी है तो चूल्हा गरम किये रखो। लेकिन यह अक्ल तेलगाना के कार्यकर्ताओ को नही है। हमने वहा चूल्हा गरम किया था, पर उन्होने ठडा करके रखा है। काम मे सातत्य चाहिए। महादेव पर बूद-बूद अभिषेक होता है, तभी महादेव प्रसन्न होते

हैं। सतत धारा चाहिए। एक लोटा पानी उनपर फेंक दिया, और फिर चले, तो इसमे महादेव प्रसन्न होनेवाले नही है।

भाषावार प्रान्त-रचना पांच मिनिट में

नीचे वालो ने और ऊपर वालो ने भाषावार प्रान्त-रचना का यह मसला नाहक जटिल बना दिया है। यह तो सादा-सा मसला है। लेकिन जैसे पाकिस्तान और हिन्दुस्तान की सीमाए बनाने मे कमीशन बैठा, वैसे इसमें भी होना चाहिए, ऐसा ये लोग कहते है। कर्नाटक वाले कहते है कि कावेरी से गोदावरी तक का प्रदेश हमें चाहिए, यानी पास के दोनो प्रातो में वे अपना पैर डालना चाहते हैं। इसी तरह आन्ध्र वाले भी बस्तर से लेकर मद्रास तक चाहते हैं। तमिलवाले कहते है कि व्यंकटगिरि से कन्याकुमारी तक का प्रदेश हमे चाहिए। लेकिन आपकी भाषा बोलनेवाले दस-पाच हजार लोग दूसरी भाषा के प्रात में गये तो क्या बिगडेगा? अगर आप मुझे अधिकार दे तो मैं पाच मिनिट मे भाषावार प्रात-रचना कर दूगा। आपमे कोई भारतीय भावना भी मौजूद है? अगर आप एक केन्द्र को कबूल करते है तो नाहक झगडे क्यो करते हो? ऐसे झगडो में मैं नही साथ दूगा। एक भाषा बोलने वाला जिला या तालुका यूनिट मान कर प्रात बनाने के लिए आप तैयार है, तो काम जल्दी हो सकता है। बम्बई-मद्रास के लिए भी झगडे हो रहे है। हम भाषावार झगडो को नही मानते है, परतु प्रात बनने मे भाषा एक होनी चाहिए और जनता की भाषा मे सरकार का काम चलना चाहिए, इस उसूल को हम मानते है। मद्रास-बम्बई जैसे के लिए तो मै कहूगा कि 'टॉस' करके मसला तय करो। क्या आपका प्रात बन जाने के बाद भी आपके लोग प्रात के बाहर नही जायगे? सारा हिन्दुस्तान आपका है। आप बाहर जाने वाले है और बाहर के लोग आपके प्रान्त मे आनेवाले है।

मेरा आपको यही सदेश है कि हिम्मत करके सारी सस्थाए तोड डालो।

२

उदय की मंगल वेला

मुझे ऐसा लगता है कि दुनिया को तो क्या, हिंदुस्तान का भी दर्शन हमे ठीक नही हुआ है, और इसलिए जो छोटे-छोटे काम हम करते है, वे निस्तेज बनते है। इसलिए नही कि वे छोटे-छोटे है, बल्कि इसलिए कि जमाने की पहचान उनमे नही होती। एक कालपुरुष भी होता है और उसके अनुसार युग-धर्म होता है। नित्यधर्म के साथ जब युग-धर्म जोड दिया जाता है, तो दोनो मिलकर ही पूर्ण साधन बनता है। अगर हम एक छोटी-सी चीज हिंदुस्तान भर मे फैला दे तो उसमें से महान शक्ति का निर्माण हो सकता है। पर बावजूद इसके कि हम नही चाहते, अलग-अलग दिशाओ मे प्रयत्न हो रहे है। यदि हम अपनी प्रवृत्तियो की गिनती करने जाय तो अपार गिनती होती है और हरएक के लिए हम योजना तो अखिल भारतीय ही बनाते है। जितना सारे हिंदुस्तान मे हुआ है, उतना किसी एक जिले मे हुआ होता तो अच्छा आरभ हुआ है, ऐसा मैं कह सकता था।

गलत काम करना जैसे एक दोष होता है, वैसे ही समय पर ठीक काम न करना भी एक बडा दोष होता है और दिशा समझे बगैर काम करना तो व्यर्थ ही होता है।

भूदान मे गया जिले में ४०-४५ हजार एकड जमीन तो हो ही गई है। उन्होंने एक लाख का सकल्प किया था। वह मियाद मे पूरा नही हुआ। फिर भी उसे वे पूरा करेंगे, इसमे सदेह नही। और यह उम्मीद भी मै उस जिले से करता हू कि वह भूमि के मसले को हल करने की राह सबको दिखायेगा। जहा इतनी जागृति हो, वहा हम यह नही कह सकते कि कार्यकर्त्ता और लोग काम के लिए प्रेरित या प्रवृत्त नही किये जा सकते, पर कताई-

मडल तो वहा कुल तीन ही हैं। भूमि-दान का काम वहा होता है और कताई-मडल का नही होता। यह सोचने की बहुत जरूरत है कि हम जो भी काम करे, वह सब मिलकर करे, सबकी शक्ति उसमे लगा करके करे। हम इस बात के महत्व को समझें।

समग्र दृष्टि का अभाव

पिछले पाच-छ सालो मे हमने 'समग्र दृष्टि' शब्द का इस्तेमाल तो बहुत किया, लेकिन काम टुकडो-टुकडो में ही हो रहा है। शक्ति हमारे पास बहुत ज्यादा नही हैं, यह तो हम जानते हैं, फिर भी जो शक्ति है, उसे हम एकाग्र नही कर पा रहे हैं। पहाड पर जो पानी गिरता है, वह चाहे थोडा ही हो, लेकिन अगर वह एकाग्र हो जाय तो उसमे से नदी पैदा हो जाती है और यदि बहुत भी हो, पर एकाग्र न हो, तो उसकी नदी नही बनती। छोटे-छोटे नाले उसमें से बहते हैं, जो आगे जाकर सूख भी जाते हैं। नदी का दर्शन उनमे नही होता। यह बुनियादी बात मैं बोल रहा हू। तो मेरे मन मे आया कि पहले 'सर्व-सेवा-सघ' पूरा बनना चाहिए था, वह नही बन सका। यानी उनका जो स्वरूप मेरे मन मे था, वह हम नही बना सके। वैसे ही ग्रामोद्योग की हालत है। मगनवाडी (वर्धा) मे उसका काम चलता है, पर वर्धा शहर में या आसपास उसका दर्शन नही होता। एकाध प्रान्त मे कही एकाध दूकान चल रही होगी।

श्री रामेश्वरी नेहरू ने मुझे लिखा था कि वे सर्व-सेवा-सघ से क्यो न हट जाये? कारण यह था कि वे ग्रामोद्योग की चीजे इस्तेमाल नही कर पा रही हैं और सघ में प्रस्ताव तो ग्रामोद्योग के व्यवहार का हुआ है। मैंने उन्हें समझाया कि दिल्ली मे इस तरह के विचार को माननेवाले तो कई लोग हैं, हजार-पाच सौ तो होगे ही। क्या उनकी दृष्टि से ऐसा इतजाम वहा नहीं हो सकता कि हाथ के चावल, शक्कर आदि वहा मिले? उन्हे लगा कि हा, ऐसा हो सकता है। दिल्ली मे तो अखिल भारत से आये हुए लोग रहते हैं। उनमें बहुत सारे विचारक भी हैं। किन्तु ग्रामोद्योग का कोई दर्शन वहा नही है। हम यह कहे कि सिर्फ शहरो मे ही ग्रामोद्योगो का दर्शन नही है और ग्रामो

में वह है, सो भी बात नही है। लेकिन मिसाल मैं शहरो की दे रहा हू। कलकत्ते में भी इस विचार के हजार-पाच सौ लोग तो होगें ही। वे इसका इतजाम कर सकते है, पर नही करते। ऐसे काम चल रहा है। उसकी जड में जो दोप है वह यही कि हम अलग-अलग योजनाए बनाते है, अलग-अलग शक्ति लगाते है।

शक्ति-क्षीणता का सामान

सारे कामो को मिलाने की बात जब आती है तब हमारे कार्यकर्त्ताओ के मन मे लाभ और हानि का विचार पैदा होता है। कई लोगो ने मुझसे इसकी चर्चा की। अलग-अलग काम करने से हरएक काम ज्यादा अच्छी तरह होगा और सब कामो को मिला देने से सभी काम थोडे-थोडे होगे, किसी काम की विशेष प्रगति नही होगी, इस तरह नफा-नुकसान का हिसाब वे लगाते है। फिर भी मेरे मन मे आता है कि यह सारा नफा-नुकसान गौण हो जाता है, जबकि हम देखते है कि हमारा समाज 'विकेंद्रित' नही, बल्कि 'विकीर्ण' है। 'विकेंद्रित' होना तो मैं अच्छा मानता हू, उसमे स्वतत्र बुद्धि सब जगह लगेगी। पर हमारा काम तो 'विकीर्ण' है, 'विकेद्रित' नही। कई बार मैंने देखा है कि एक काम में जब हम हार जाते है तो दूसरा उठाते है। कई बार यह जानते हुए कि फलाना काम हमसे नही होगा, केवल इसी विचार मे उसमें लगे रहते है कि अब तो अपना जीवन हमने उसमें दे दिया, तो हम पीछे कदम उठानेवाले नही है। यश की निश्चितता न होते हुए भी केवल अपना जन्म (जीवन) उस काम मे दे दिया इसलिए उसे नही छोडते। जीवन तो दे दिया होता है, लेकिन काम में विश्वास नही होता। इसका नतीजा उत्तरोत्तर निराशा में होता है, ताकत या उत्साह की वृद्धि में नही होता।

जनता के मन की बात

देश में नई-नई ताकते पैदा हो रही है। इतना होने पर भी मैंने अनुभव किया कि बेचारे लोग भूखे है, प्यासे है, लेकिन सर्वोदय-विचार की इज्जत करते है। यह एक आश्चर्य की बात है। हमने उनकी श्रद्धा के लायक बहुत काम

किया हो, ऐसी बात नहीं है। इसपर भी वे बेचारे हमारे विचार में श्रद्धा रखते हैं। यह चीज उन्हें जचती है। मैं मानता हूं कि उन्हें इस बात का सहज भान है कि यह विचार उनके लिए बहुत अनुकूल है, इसीलिए उनका स्वाभाविक आकर्षण इस ओर है। वैसे ही इस विचार के सुनने से लोग कितने संतुष्ट होते हैं, यह भी मैंने देखा। जैसे चंद्रमा के दर्शन से समुद्र प्रसन्न होता है, वैसे जनता इस विचार से प्रसन्न होती है। बिहार में इसका प्रत्यक्ष रूप मैंने देखा।

कार्यकर्त्ताओं की भ्रांतमति

बिहार में मुझे एक विशेष दर्शन भी हुआ है। मेरी मीटिंगों में विचार सुनने के लिए बीस-बीस, पचीस-पचीस हजार लोग आते थे। पर दान मिलता था कभी पचास एकड़, कभी सौ एकड़। तो मैंने सोचा कि इसका कारण क्या है? इसलिए मैंने गया में बुद्ध भगवान् का नाम लेकर एक लाख एकड़ का संकल्प कर लिया और दामोदर को वहां छोड़ दिया। अनुभव पर से मुझे विश्वास था कि अगर हम अपना विशेष मनुष्य वहां न रखें, तो बावजूद इसके कि जनता इसे चाहती है, काम आगे बढ़ेगा नहीं। नतीजा यह है कि काम हो रहा है। काम तो वहां के लोग ही करते हैं, पर उनको प्रेरणा देनेवाला, जगानेवाला मनुष्य उनके पास पड़ा है। इसलिए लोग काम में बराबर लगे हैं। तो जनता बिलकुल तैयार बैठी है और कार्यकर्त्ता भी हैं, परंतु उनकी मति भ्रांत है। और यह भी उनके ध्यान में नहीं आ रहा है कि दूरदृष्टि से जनशक्ति निर्माण करने में हमें लग जाना चाहिए। गीता में लिखा है कि 'एकस्मिन् कार्ये सक्तम्' (एक ही फुटकर काम में आसक्त हो जाता है।) 'सर्व-सेवा-संघ' के पास जितने रचनात्मक कार्यकर्त्ता हैं, उतने और कहीं नहीं हैं, लेकिन उनमें हरएक छोटे-छोटे काम की आसक्ति पैदा हो जाती है। लोग मुझसे पूछते हैं कि 'हम चरखे का काम करें या अकाल-निवारण का? या इसी तरह का दूसरा काम करें? पर आप मुझसे पूछिए तो मैं तो यही कहूंगा कि 'मेरे मुख रामनाम, दूसरो न कोई।' मुझे दूसरे नाम लेने ही

में वह है, सो भी बात नही है। लेकिन मिसाल मैं शहरो की दे रहा हू। कलकत्ते में भी इस विचार के हजार-पाच सौ लोग तो होगे ही। वे इसका इतजाम कर सकते है, पर नही करते। ऐसे काम चल रहा है। उसकी जड में जो दोष है वह यही कि हम अलग-अलग योजनाए बनाते है, अलग-अलग शक्ति लगाते है।

शक्ति-क्षीणता का सामान

मारे कामो को मिलाने की बात जब आती है तब हमारे कार्यकर्त्ताओ के मन में लाभ और हानि का विचार पैदा होना है। कई लोगो ने मुझसे इसकी चर्चा की। अलग-अलग काम करने से हरएक काम ज्यादा अच्छी तरह होगा और सब कामो को मिला देने से सभी काम थोडे-थोडे होगे, किसी काम की विशेष प्रगति नही होगी, इस तरह नफा-नुकसान का हिसाब वे लगाते हैं। फिर भी मेरे मन में आता है कि यह सारा नफा-नुकसान गौण हो जाता है, जबकि हम देखते है कि हमारा समाज 'विकेंद्रित' नही, बल्कि 'विकीर्ण' है। 'विकेंद्रित' होना तो मैं अच्छा मानता हू, उसमे स्वतत्र बुद्धि सब जगह लगेगी। पर हमारा काम तो 'विकीर्ण' है, 'विकेंद्रित' नही। कई बार मैंने देखा है कि एक काम में जब हम हार जाते हैं तो दूसरा उठाते है। कई बार यह जानते हुए कि फलाना काम हमसे नही होगा, केवल इसी विचार से उसमे लगे रहते है कि अब तो अपना जीवन हमने उसमें दे दिया, तो हम पीछे कदम उठानेवाले नही है। यश की निश्चितता न होते हुए भी केवल अपना जन्म (जीवन) उस काम में दे दिया इसलिए उसे नही छोडते। जीवन तो दे दिया होता है, लेकिन काम में विश्वास नही होता। इसका नतीजा उत्तरोत्तर निराशा में होता है, ताकत या उत्साह की वृद्धि मे नही होता।

जनता के मन की बात

देश में नई-नई ताकतें पैदा हो रही है। इतना होने पर भी मैंने अनुभव किया कि बेचारे लोग भूखे है, प्यासे है, लेकिन सर्वोदय-विचार की इज्जत करते है। यह एक आश्चर्य की बात है। हमने उनकी श्रद्धा के लायक बहुत काम

शक्ति है, उसका प्रत्यक्ष अनुभव हमें नही आता।

'दर्शन' के बिना 'प्रदर्शन'

जनता मानती है कि हमपर उसका बहुत हक है। हमपर मागें बहुत है। कोई हमें बुलाता है भारत सेवक समाज में, कोई कम्यूनिटी प्रोजेक्ट में। कोई कही बुलाता है, कोई कही बुलाता है। हैदराबाद मे काग्रेस ने हमे बुलाया, ग्रामोद्योग-प्रदर्शनी के लिए। वह बुलाती है तो कुछ तो श्रद्धा भी रखती है और कुछ शोभा के लिए भी बुलाती है, लेकिन प्रदर्शनी से शोभा मात्र होती है। उसमे ताकत भी हमारी काफी लगती है। हमें यह आशा होती है कि उससे हमारा काम आगे बढेगा, लेकिन हमारा काम प्रदर्शनी से नही बढेगा, बल्कि 'दर्शन' से बढेगा जो हममे नही है। वह दर्शन अगर हमें हो जाय और उसको ध्यान में रखकर हम अपना काम करे तो सारी चीजें एक-दूसरे के साथ जुड जाती है। देश मे कई तरह के केन्द्र है—तालीमी-सघ के केद्र है, कस्तूरबा वालो के कुछ केद्र है, खादी-समिति के कुछ केद्र है और फिर कुछ सरकारी केद्र है और कुछ गैर-सरकारी केद्र भी है। ये सब अलग-अलग केद्र क्यो है, समझ मे नही आता। हमे इस विचार के मूल में जाना चाहिए, इसका सशोधन करना चाहिए और 'सर्व-सेवा-सघ' को एकरस बनाना चाहिए। वही सारा दोष है। कई प्रकार की कमजोरियो के रूप में उसका दर्शन होता है। जड में अगर एकाग्रता रही, तो सारे काम ठीक ढग से होगे और छोटे-छोटे कार्यकर्त्ता शक्तिशाली सिद्ध होगे।

विचार-स्रोत सूख रहा है

ये छोटे-छोटे कार्यकर्त्ता बहुत बडी शक्ति प्रकट कर सकते है, यदि उन्हें एकाग्र मार्ग-दर्शन मिले। गाधीजी की लिखी हुई 'गीताबोध' या 'अनासक्ति योग' पुस्तक—मुझे ठीक याद नही है कौनसी—आध्र मे अनुवादित हुई थी। उसका तेलुगु अनुवाद कोई बीस साल पहले निकला, पर तबसे अबतक उसका दूसरा सस्करण भी नही निकला है। इसपर से आप सोच सकते है कि वहा के कताई-मडलो का काम कैसा होता होगा? यह जो मूल

नही है । इस नाम में दूसरे नाम आ जाते है, तो आ जाते है और अगर नहीं भाते तो दूसरे नाम लेने की मुझे जरूरत नही है ।

सर्वोदय-समाज से जनता की अपेक्षा

मुझे यह विश्वास हो गया है कि अगर हम अपने कामो को समग्र दृष्टि से करे तो उन कामो के लिए प्रतिकूल परिस्थिति हिन्दुस्तान में कहीं भी नहीं है । यह बात मै अनुभव से निश्चयपूर्वक कहता हू, बल्कि मै तो यह भी कहता हू कि सर्वोदय-समाज से लोगो की जो अपेक्षा दिन-ब-दिन बढ रही है, उसमें कोई घटाव नही है । बापू के जाने के बाद १९४८ में फौरन यह शब्द चला । तब सर्वोदय से लोगो को जितनी आशा थी, उससे आज कम नही, ज्यादा ही है, ऐसा मेरा अनुभव है । कुछ भोले लोग तो यहा तक मानने वाले हैं कि अगर कुछ काम होगा तो इसी कार्यक्रम से होगा । उसका नतीजा यह है कि दूसरे लोग जो कुछ जन-सेवा करना चाहते है, और उसे बढ़ावा देना चाहते है वे भी सर्वोदय का नाम ले लेते है । कम-से-कम सर्वोदय से उनका विरोध नही है, यह तो वे बतलाते ही है । यह सब उनको इसलिए करना पडता है कि जनता में सर्वोदय के लिए श्रद्धा है, आशा है । जिस शब्द के लिए इतनी श्रद्धा है, उसका अनुष्ठान हम श्रद्धा और आशा से करें और ठीक-ठीक ढग से तथा निष्ठापूर्वक करें तो काम क्यो नही होगा ?

हमारा काम अगर छोटा है, तो भी अगर वह शुद्ध, स्वच्छ और निर्मल रहा तो शक्तिशाली होगा, अन्यथा नाममात्र की सख्या बढती है और काम कुछ नही होता । इसलिए हमे जो भी काम करना हो वह सर्वोदय और समग्रता को सामने रखकर करना चाहिए और उसके दोषो को दूर करना चाहिए । ये दोष छोटे कार्यकर्त्ताओ के नहीं हैं, बल्कि हम लोगो के है जो कि सचालक माने जाते है । हम लोग इतने विकीर्ण है कि एक-दूसरे के काम की जानकारी भी हमें नही है । एक-दूसरे के साथ हमारा कोई सम्पर्क नही होता । जहा जानकारी भी नही वहा एक-दूसरे के काम से लाभ उठाने का सवाल ही नही उठता । यह विकीर्णता हमारे काम को क्षीण कर रही है और हममें जो

शक्ति है, उसका प्रत्यक्ष अनुभव हमें नही आता ।

'दर्शन' के बिना 'प्रदर्शन'

जनता मानती है कि हमपर उसका बहुत हक है। हमपर मागें बहुत है। कोई हमें बुलाता है भारत सेवक समाज में, कोई कम्यूनिटी प्रोजेक्ट में। कोई कही बुलाता है, कोई कही बुलाता है। हैदराबाद में काग्रेस ने हमें बुलाया, ग्रामोद्योग-प्रदर्शनी के लिए। वह बुलाती है तो कुछ तो श्रद्धा भी रखती है और कुछ शोभा के लिए भी बुलाती है, लेकिन प्रदर्शनी से शोभा मात्र होती है। उसमे ताकत भी हमारी काफी लगती है। हमें यह आशा होती है कि उससे हमारा काम आगे बढेगा, लेकिन हमारा काम प्रदर्शनी से नही बढ़ेगा, वल्कि 'दर्शन' से बढेगा जो हममें नही है। वह दर्शन अगर हमें हो जाय और उसको घ्यान में रखकर हम अपना काम करें तो सारी चीजें एक-दूसरे के साथ जुड जाती है। देश में कई तरह के केन्द्र है—तालीमी-सघ के केंद्र है, कस्तूरवा वालो के कुछ केद्र है, खादी-समिति के कुछ केद्र है और फिर कुछ सरकारी केद्र है और कुछ गैर-सरकारी केंद्र भी है। ये सब अलग-अलग केद्र क्यो है, समझ में नही आता। हमें इस विचार के मूल में जाना चाहिए, इसका सशोधन करना चाहिए और 'सर्व-सेवा-सघ' को एकरस वनाना चाहिए। वही सारा दोष है। कई प्रकार की कमजोरियो के रूप मे उसका दर्शन होता है। जड में अगर एकाग्रता रही, तो सारे काम ठीक ढंग से होगे और छोटे-छोटे कार्यकर्त्ता शक्तिशाली सिद्ध होगे।

विचार-स्रोत सूख रहा है

ये छोटे-छोटे कार्यकर्त्ता बहुत बडी शक्ति प्रकट कर सकते है, यदि उन्हें एकाग्र मार्ग-दर्शन मिले। गाधीजी की लिखी हुई 'गीतावोध' या 'अनासक्ति योग' पुस्तक—मुझे ठीक याद नही है कौनसी—आध्र में अनुवादित हुई थी। उसका तेलुगु अनुवाद कोई बीस साल पहले निकला, पर तबसे अबतक उसका दूसरा सस्करण भी नही निकला है। इसपर से आप सोच सकते हैं कि वहा के कताई-मंडलों का काम कैसा होता होगा? यह जो मूल

विचार है, उसकी यह हालत है। आंध्र तो बेचारा पहले ही से बिल्कुल जर्जर हैं। वहा अनेक पक्ष-विपक्ष है। सर्वोदय वालो के भी अनेक पथ-उपपथ चलते है। कोई किसी की नही सुनता। यह भी नही कि तेलुगु भाषा में पुस्तकें कम बिकती है। बल्कि गौरवपूर्वक कहना चाहिए कि तेलुगु में जितना कम्यूनिस्ट साहित्य खपा है, उतना दूसरी किसी भाषा में नही खपा है। वह साहित्य स्त्रियो और बच्चो तक पहुचा है। गाने भी उस भाषा में बने है। तो साहित्य लोग पढते हैं। नही पढते, ऐसी बात नही है। लेकिन हमारे साहित्य की यह दुर्दशा है। जहा विचार-स्रोत ही सूख रहा है, वहा बाहरी कामो से कितना जोर आ सकता है ? हमारी इतनी सस्थाए है, इतनी शक्ति है, यदि वे सब ठीक ढग से काम करें तो बहुत काम होगा।

मैं नही जानता कि मुझे कबतक बिहार मे रहना पडेगा, लेकिन यदि बिहार के कामो मे एकरसता आई, तो भूमि के मसले के साथ-साथ बाकी की सारी चीजे प्रफुल्लित होगी। यह हालत सिर्फ बिहार की ही नही है। हिंदुस्तान के सभी सूबो की यही हालत है।

साधना का अवसर

शेक्सपीयर ने लिखा था—There is a tide in the affairs of Man—'मनुष्य के जीवन मे एक उन्नत क्षण आता है।' यदि हम समय को पहचानेंगे तो कृतकार्य होगे, नही तो गये-बीते होगे। हमारी साधना के लिए यह बहुत अच्छा मौका है। यदि आप सब योग देगे तो परमेश्वर की कृपा से हिंदुस्तान का उदय शीघ्र होगा, ऐसे सब लक्षण है।

बिहार-राज्य-कताई-मण्डल-सम्मेलन
में भाषण।
चांडिल, ४ मार्च '१९५३

३

लोक-शक्ति की आराधना

मैंने अपने व्याख्यानो मे दो वातें वार-वार दुहराई हैं। एक यह कि गरीव लोग जो समर्पण करते हैं, वह यज्ञ है और उससे वातावरण की शुद्धि होती है। इस काम की क्रातिकारी शक्ति उसमे से पैदा होती है। वहुत-से लोग इस वात को समझे नही हैं। कम्यूनिस्ट भाई पूछते हैं कि आप गरीवो से दान क्यो ले लेते हैं ? वे कहते हैं कि "आप कम-से-कम गरीवो को तो मत लूटो !" मैं कहता हू कि "आप जिस तरह से सोचते हैं, वह वैज्ञानिक ढग नही है। यह व्याकुल वुद्धि है। अगर आप वैज्ञानिक ढग से सोचेंगे तो ध्यान में आयेगा कि गरीवो के यज्ञ में, उनके समर्पण में ही इस कार्य की मुख्य शक्ति है। लेकिन अहिंसा की रीति से आप यह काम करने की वात सोचेंगे तव यह चीज आपके ध्यान में आयेगी, नही तो नही आयेगी।"

दूसरी चीज है दान। दान का अर्थ है, अपने पास जो है उसका सविभाजन। इस प्रकार दान के देनेवाले का हृदय-परिवर्तन होता है। इसके लिए इन दोनो के अलावा तप की जरूरत होती है। तप करने की जिम्मेदारी कार्यकर्त्ताओ पर है। आप सारे जो यहा आये हैं, वे तपस्वी हैं और आपने तप का व्रत लिया है। यज्ञ, दान और तप के अलावा एक चौथी वस्तु भी है, जो मैंने खास अपने लिए रख छोडी है। मेरे पास मेरी मालकियत की कोई वस्तु नही है। इसलिए मेरे पास न तो यज्ञ की शक्ति है, न दान की। तप थोडा वहुत कर लेता हू, लेकिन अपनी मर्यादा में, क्योंकि शरीर कमजोर हो गया है। इसलिए मेरे पास सिर्फ जप ही रह जाता है। दो साल से मैंने लगातार जप चलाया है। सागर मे दो साल पहले गाधी-जयती के रोज, जव कि हमको सिर्फ वीस हजार एकड भूमि मिली थी,

उसी समय पाच करोड की माग मैंने देश के सामने रखी। कहां बीस हजार और कहा पाच करोड! पर मेरी ऐसी श्रद्धा थी कि सत्यवस्तु के जप से जो कार्य-शक्ति पैदा होती है, उसका नाप हम नही कर सकते। इसलिए पाच करोड की भाषा का आरभ मैंने जप के तौर पर कर दिया।

उत्तर प्रदेश में जब मैंने प्रवेश किया तो वही भाषा मेरी चली। उसी माग को बराबर दुहराता रहा हू। परतु जब उत्तर प्रदेश के लोग सकल्प करने लगे और दस लाख की बात निकली तो मैंने कहा, "हमारे लिए दस लाख कम है। हमारी माग तो एक करोड एकड की है। सकल्प एक करोड का करना होगा। लेकिन अभी तो पाच लाख का ही करो।" एक तरफ से हम पाच लाख का सकल्प करे और दूसरी तरफ से एक करोड की माग मन मे रखे, ये दोनो बाते परस्पर-विरोधी नही है। हमारा रास्ता एक यश मे से दूसरे यश मे प्रवेश करने का होना चाहिए। अपयश में से यश की ओर जाने की बजाय छोटे यश में से बडे यश में जाना, यह मार्ग विशेष श्रेयस्कर है।

उत्तर प्रदेश का पराक्रम

प्रस्ताव और सकल्प में फर्क है। हम प्रस्ताव करते है। प्रस्ताव हो जाता है। उसमे हम अपनी इच्छा प्रकट करते है। लेकिन सकल्प मे मनुष्य कृतनिश्चय होता है। तो उत्तर प्रदेश में हमने पाच लाख का सकल्प किया। हमने उम्मीद यह रखी थी कि इस सम्मेलन से पहले पाच लाख पूरे हो जायगे और आज मुझे यह कहने में खुशी होती है कि पौने पाच लाख पूरे हो गये है। पच्चीस हजार की कमी रह गई है। पर उसे वे पूरा करके रहेंगे। जब मैंने उत्तर प्रदेश छोडा था तब तीन लाख दस हजार हो गये। अब छ महीने में डेढ लाख से भी ज्यादा जमीन ये लोग वहा हासिल कर सके। इसका अर्थ यह है कि वहा जो वद्धप्रतिज्ञ लोग थे, वे अपनी प्रतिज्ञा को नही भूले है। वे अपना काम करते रहे—बावजूद इसके कि कार्यकर्त्ताओं की सख्या बहुत कम थी प्रात के विस्तार और जनसख्या के मुकाबले में। जनसख्या की दृष्टि से वह एक देश होता है, प्रात काहे का? लेकिन उन्होंने

बहुत जोरों से काम किया और वहुत तकलीफ उठाई। दस-बारह महीनो का मेरा उनका परिचय है। उनसे अधिक लगन वाले कार्यकर्त्ता पाने की अपेक्षा हम नहीं रख सकते। यह खुशी की बात है कि उन्होने अपना सकल्प करीब-करीव पूरा कर लिया है।

महान् शब्द जब सहज मुख से निकलते है, तो जीवन भी महान् हो जाता है। पर महान् शब्द जबर्दस्ती मुह से न निकलें। यश देने-दिलाने वाला भगवान् पडा है। उसकी फिक्र करना हमारा काम नही है।

तप : लोक-शक्ति का स्रोत

यहा विहार में जब हमने कदम रखा, तो सारा जमीन का मसला ही हल करने की भाषा शुरू कर दी। गया मे वुद्ध भगवान् के नाम से सकल्प किया और लोगो ने उसे वुद्ध भगवान् के नाम से उठा लिया। गया जिले का मसला हल करने के लिए तीन लाख एकड जमीन चाहिए। उसकी पहली किस्त के तौर पर मैंने एक लाख के कोटे की बात कही। उसी बात को मै दुहराता गया। और उसे भी लोगो ने उत्साह के साथ उठा लिया। मै तो आखिर आपका प्रतिनिधि हू। आपके मन की बात मै बोलता हू। मै जो बोलता हू, उसकी सिद्धि के लिए तप आपको करना पडेगा। अगर आप यह सोचें कि मेरे ही जप-तप से काम होगा, तो वह बात गलत है। और यदि हो भी गया तो भी वह निकम्मा होगा, क्योकि उसमे से लोक-शक्ति प्रकट नही होगी। और उसका होना एक चमत्कार माना जायगा। पर भगवान् की कृपा से वह चमत्कार होने वाला नही है। तो मेरा जप मेरे पास रहने दीजिए और तप में आप लग जाइये—काया-वाचा-मन से। मै भगवान् से प्रार्थना करता हू कि वह आपको तप की शक्ति दे।

नाता पार्टी का नहीं, व्यक्ति का

काग्रेस वालो ने इस काम में इतनी मदद दी और प्रजा-समाजवादियो ने इतनी मदद दी, इस तरह अनुभवो का वर्गीकरण और विश्लेषण करना

गलत है। हमे तो मानव-स्वभाव को देखना चाहिए, उसकी गहराई में जाना चाहिए। अगर हम गहराई मे देखे तो मालूम होगा कि काग्रेस वाले, प्रजा-समाजवादी, रचनात्मक सघो के कार्यकर्त्ता इत्यादि सबके बारे में करीब-करीब समान ही अनुभव आये है। जहा तक इस तरह के काम का ताल्लुक है, वर्गीकरण निकम्मा है। कुछ लोग इसे समझे है और कुछ नही समझे हैं। कुछ समझने पर भी मोहवश त्याग नही कर पाते हैं। हमे अपने मन में से वर्गीकरण की बात निकाल देनी चाहिए। यही विचार मन मे रखना चाहिए कि जो काम करता है, वह व्यक्ति के नाते काम करता है। फिर चाहे वह किसी भी पार्टी का हो। पार्टी काम करती है, यह मत कहो, बल्कि व्यक्ति काम करता है, ऐसा कहो। मै सब लोगो को व्यक्ति के नाते देखता हू।

सर्वोदय-समाज की खूबी यह है कि उसमे सहज स्फूर्ति का महत्व है। हमारे पास ऐसा क्या अधिकार है ? कहने का मतलब यह है कि हममें से हरएक अपने लिए सोचे। हम जितना समय इस काम को दे सके, उतने में अपनी पूरी ताकत लगावे। काम मे मुश्किले बहुत है, लेकिन अपनी पूरी ताकत लगाने के बाद अपनी मर्यादा समझकर सतोष मानना चाहिए।

हमारा स्वधर्म

कभी हम अपने घर-गृहस्थी की फिक्र मे रहते है और ज्यादा समय नही निकाल सकते। तो जितना समय निकाल सकते है, उतनी ही अपनी मर्यादा समझकर समाधान मान लेना चाहिए। घर के काम के अलावा और कोई सार्वजनिक काम हमे करने पडते है और उनके कारण हम अन्य काम नही कर सकते तो हमे पुराने काम के साथ नये काम का वजन करके तौलना चाहिए। लेकिन नये काम का तौल अधिक होता हो तो पुराने काम को छोड देना चाहिए, ऐसी बात नही है। धर्म के विषय मे, जो धर्म श्रेष्ठ होता है, उसे लेना और कनिष्ठ देखकर छोडना, ऐसा नही होता। बल्कि सोचना यह होता है कि जो काम हमारे हाथ मे है, वह चाहे छोटा हो, चाहे बडा, हमारे लिए स्वधर्म क्या है ? अगर हम इसी नतीजे पर पहुचे कि जो काम हम कर रहे

है, वही हमारा स्वधर्म है, तो हमे उसी काम को करते रहना चाहिए। जिसका स्वधर्म दूसरा है, वह हमारे इस काम में योग नही दे सकता। इसका उसे दु ख नही होना चाहिए। वह हमारे काम के साथ सहानुभूति रखता है, इसी को उसे अपनी मर्यादा माननी चाहिए। लेकिन अगर आत्म-परीक्षण से यह निश्चय हो कि हमारी बुद्धि इस नये काम को ही बुनियादी काम मानती है और फिर भी दूसरे कामो का बोझ हमारे सिर पर हो तो उस बोझ को हमे विवेकपूर्वक हटाना चाहिए और इस काम में कूद पडना चाहिए। फिर यह नही सोचना चाहिए कि जो काम हमने हाथ मे लिया है, उसका क्या होगा? जिस हालत मे मन में यह निश्चय हो जाता है कि यही काम बुनियादी है तो वह उस वक्त का युगधर्म बन जाता है। युगधर्म नैमित्तिक होता है। वह कोई चालीस-पचास साल नही चलता। पर जितने समय के लिए वह होता है तब नित्यधर्म उसके सामने फीके पड जाते है। उसी काम का वचन सबसे अधिक होता है। हम रोज प्रार्थना करते है। यह नित्यधर्म है। लेकिन उसी वक्त कही आग लग जाय तो हमें प्रार्थना छोडकर आग बुझाने जाना पडेगा, क्योकि नैमित्तिक धर्म बलवान् होता है। जिस नैमित्तिक धर्म के विषय में हम नि सशय हो गये हो, उसके लिए अगर नित्यधर्म छोडना भी पडे तो कुछ समय के लिए उसे छोडना चाहिए।

आवाहन

मैंने इसी प्रेरणा से इस काम को हाथ मे लिया है। १९१६ मे जब मै बापू के पास पहुचा था तबसे बापू के प्रयाण तक मै रचनात्मक कार्य ही करता रहा। मैंने अपने यौवन का मुख्य अश रचनात्मक काम मे लगाया। जो शख्स अपने यौवन मे रचनात्मक कार्य करता आया और जिसने अपनी सारी शक्ति रचनात्मक कामो मे ही लगाई, वह वृद्धावस्था में दूसरा काम नही उठाता। पर मैंने इस काम को ईश्वर का इशारा समझकर उठाया है। मेरे मन का यह निश्चय हो गया है कि इसको करने से सब कुछ सधेगा और

इसको न करने से सब कुछ डूबेगा। इस तरह अन्वय-व्यतिरेक से देखकर मैं इस दृढ़ निश्चय पर पहुंचा हूं। इससे मुझे अन्तःसमाधान मिलता है।

आप अपने लिए यह सोचें कि आप किस भूमिका पर हैं। मेरा जो निर्णय अपने बारे में हुआ, वह अगर आपका अपने बारे में है तो आप इस काम को उठाइये। सर्वोदय-समाज में जिनका नाम नहीं है, ऐसे जो हजारों लोग सर्वोदय के प्रेमी और उससे सहानुभूति रखने वाले हैं, उन सबसे मैं यह विश्लेषण करने के लिए कहूंगा। उनका भी निर्णय अगर मेरे जैसा हो जाय तब तो मैं आप सबसे कहूंगा कि आप अपनी जीवन-स्थिति का विचार न करते हुए सब कुछ छोड़कर इसमें कूद पड़ें। फिर देखिए, यह काम सफल ही होगा।

युगधर्म

यह सीधे हिसाब की बात है। इसका आप गणित करके देखिये। आजकल की लड़ाई में गणित का हिसाब चलता है। पिछली लड़ाई में जर्मनी ने इसी तरह का गणित किया। जब उन्होंने देखा कि गणित के हिसाब से वे हारनेवाले हैं तो शरण में गये, क्योंकि वह हिसाब की बात थी। देखा कि अंग्रेजों और अमेरिकनों के मुकाबले में उनका शस्त्रास्त्र-बल कम पड़ता था। वैसी ही हिसाब की बात यहां भी है। मुझे दामोदरदास सुनाते थे कि गया में अगर हम उन्हें सैंतीस कार्यकर्त्ता देते हैं तो वहां का कोटा दस महीने में पूरा होगा। और तीन सौ सत्तर कार्यकर्त्ता देते हैं तो एक महीने में काम पूरा होगा। काम तो होगा ही, सिर्फ लोगों के पास पहुंचने वालों की तादाद का हिसाब है। इसलिए आप सबसे मेरा यह कहना है कि इस काम को सिर्फ यह एक अच्छा काम है, इतना ही समझकर मत उठाइये, बल्कि यह युगधर्म है, यह एक ऐसा काम है कि इसके करने से सब सधेगा और न करने से सब बिगड़ेगा, ऐसा अनन्य और अव्यभिचारी भाव आपके मन में पैदा हो जाय, तो फिर हरएक के लिए अपनी-अपनी शक्ति लगाने का ही सवाल रह जाता है।

संपत्ति-दान-यज्ञ का महत्व

अभी हमको भूमि-दान-यज्ञ ही पूरा करना है। उसे पूरा करने पर सपत्ति-दान-यज्ञ को उठाना है। लेकिन सपत्ति-दान-यज्ञ के वगैर भूदान का साफल्य नही होगा। भूमि-दान-यज्ञ का सकल्प पूर्ण करना एक वात है और उसे सफल करना दूसरी वात है। जिनको जमीनें मिलेंगी, वे जव सर्वोदय-वृत्ति के वनेंगे और हमारे कार्यकर्त्ता वन जायगे, तव भूमि-दान-यज्ञ सफल होगा। भूमि-दान के लिए एक इशारा ईश्वर की तरफ से मिला, इसलिए उस काम को उठा लिया। मैं पहले से ही जानता था कि सपत्ति-दान के विना भूमि-दान सफल नही होगा, परतु मैंने सोचा कि शुरू से ही दो वातें उठाना ठीक नही है। और दो वाते उठाने का इशारा भी मुझे नही मिला था। अगर इशारे के वगैर मैं कोई काम उठाऊ तो वह अहकार होगा। उससे कुछ वनेगा भी नही। और मेरी जो ताकत है, वह भी टूट पडेगी। मुझे उस वक्त सिर्फ भूदान का ही इशारा मिला था।

परतु विहार में कदम रखने के वाद जव जमीन का मसला हल करने की वात आई, तव मुझे लगा कि सपत्ति-दान-यज्ञ की भी जरूरत होगी। सपत्ति-दान के रूप में कोई एक सामान्य निधि इकट्ठी करने की कल्पना नही थी। जो इसको अपने नित्य जीवन का विचार समझकर सपत्ति-दान करेंगे, उन्हीं की सपत्ति का उपयोग करना हम चाहते है। यह कोई उत्साह मे आकर करने की वात नही है, वल्कि सोच-विचारकर करने की वात है। फिलहाल व्यक्तिगत रूप से ही यह काम करने की वात सोची है। जो इसे नित्यधर्म के रूप में मानेगा उसी का दान टिकेगा। उनके लिए वह सहज कर्म होना चाहिए। उसका वोझ नही मालूम होना चाहिए। हमारे शरीर का वजन अगर ठीक प्रमाण मे हो तो हमें उसका वोझ नही मालूम होता। उसी तरह सपत्ति-दान-यज्ञ मे सहज त्याग होना चाहिए। घर में लडका पैदा होता है तो वह खाना-पीता है। लेकिन उसका वोझ नही मालूम होता। गृहस्थ के जीवन का वह सर्वोत्तम अंग माना जाता है। सवको

आनद होता है। उसी तरह सपत्ति-दान-यज्ञ में दान देनेवाले को आनद होना चाहिए। इसलिए सपत्ति-दान-यज्ञ तो व्यक्तिगत तौर पर करने का ही काम है, कम-से-कम इस साल तक। अगले साल सोचेंगे। इस साल तो भूमि-दान का ही काम पूरा करना है। पच्चीस लाख का सकल्प कोई भारी नही है, परतु हमें एकाग्र बन जाना चाहिए। अगर हम एकाग्र होकर काम नही करेंगे, तो नही बनेगा। वह ऐसा देवता नही है, जो एकाग्र उपासना के बिना प्रसन्न हो।

दया के मूल को काटनेवाली दयालुता

जब मैं गोरखपुर गया, तो वहा अकाल पडा था। मुझसे कहा गया कि जरा आप देखने तो चलिए। मैंने कहा, "मैं देखकर क्या करू ?" तो उन्होंने मुझसे कहा, "उसके निवारण के लिए कुछ प्रयत्न कीजिए।" तब मैं एक सख्त शब्द बोल गया कि 'अकाल तो दूसरे लोग पैदा करें और उसका निवारण मैं करू, यह धधा मुझे नही करना है।' मेरे शब्द बहुत सख्त थे, लेकिन वह सिर्फ गोरखपुर के लिए लागू थे। कहने का मतलब यह है कि इन दो सालों में कई प्रसग ऐसे आये, जब दूसरे कामों के प्रति आकर्षण मेरे सामने आया। लेकिन मुझे एक क्षण भर के लिए भी ऐसा नही लगा कि इस काम को छोडकर दूसरा कोई काम करू।

मैंने यह एक दृष्टान्त दिया। मैं आपसे कहना चाहता हू कि इस वक्त कोई दयालु काम करने जाओगे, तो दया के मूल को ही काटोगे। हमें यह सोचना है कि हमारी दृष्टि क्या होनी चाहिए। हमारे सामने कई तरह के कार्य-मोह आते है, नये कामो का और पुराने कामो का भी मोह होता है। लेकिन अगर हमने इस काम को युगधर्म और स्वधर्म माना है तो मेरे लिए वही सर्वोत्तम काम है, ऐसा समझकर उसे करना चाहिए। दूसरे कामो का गुरु-लाघव नही सोचना चाहिए। कौन-सा धर्म बडा और कौन-सा छोटा, यह मत सोचो। मैं जो कुर्ता पहनता हू, वह इसलिए नही कि वह सबसे बडा है, बल्कि इसलिए कि वह मेरे लायक है। वह मेरे नाप का है। और मैं उसके

नाप का हू । स्वधर्म श्रेष्ठ है या कनिष्ठ है, यह विचार गलत है। वह मेरे नाप का है, या नही, यही देखना चाहिए। इसी अर्थ मे स्वधर्म मेरे लिए सर्वश्रेष्ठ हो जाता है, इसलिए नही कि वह दूसरो के धर्म से बड़ा है।

नित्य नई तालीम

कल आशादेवी (आर्यनायकम्) हमसे कहती थी कि "अगर हम लोग इस कार्य के लिए अपनी तालीम स्थगित करके सब विद्यार्थी और शिक्षक इस काम मे लग जाय तो क्या आप पसद करेंगे ?" मैंने कहा, "जी हा, पसद करूगा।" मैंने जो जवाब दिया, वह कोई सियासी विचार से 'रेकलेस' (बेदरकार) होकर नही दिया। उस तरह सोचनेवालो और सलाह देनेवालो मे से मै नही हू । मै तो मूलत रचनात्मक काम करनेवाला हू । फिर भी मैंने उन्हें वैसी सलाह दी। मेरा हेतु रचनात्मक ही है। एक साल के लिए लडके अपनी तालीम छोडकर इस काम में लग जाय तो उनकी तालीम का कोई नुकसान नही होगा, बल्कि आपको तो यह सोचना चाहिए कि एक साल के लिए ही क्या, जबतक यह मसला हल नही होता तबतक सारे लडके इसी में लग जाय तो उनका कल्याण ही होगा। वे इससे न सिर्फ अच्छा काम करेंगे, बल्कि अच्छी तालीम भी पायगे। वे नई तालीम को छोड़ते नही है, बल्कि नित्य नई तालीम पाते हैं। हमने तालीम छोडी है या और कोई काम छोडा है, ऐसा खटका मन मे नही रखना चाहिए, अपने लडके अच्छे विद्वान बन रहे है, उन्हे व्यावहारिक, नैतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से अधिक अच्छी तालीम मिल रही है, ऐसी प्रेरणा से अगर बडे लडके और उनके शिक्षक इस काम मे लग जाय तो उनका बहुत बडा लाभ होगा। फिर हमने कोई काम छोडा है, ऐसा आभास हमको नही होगा, बल्कि वह अधिक उत्तम प्रकार से सपन्न हुआ है, ऐसी प्रतीति हमें होगी। इसलिए आप सबको एकाग्र होकर इसी काम में लग जाना चाहिए। एकाग्रता की महिमा अपार है। मामूली काम के लिए भी एकाग्रता की जरूरत होती है। फिर महान् कार्य तो उसके बगैर हो ही नही सकते।

के बीच हम ऐसे खडे होते है कि दो चक्कियो मे हम पिस जायगे। हमे सरकार को चुनौती देनी होगी कि या तो आप यह करे, नही तो हम करेगे। फिर हम सत्याग्रह से करेगे। सत्याग्रही ढग से करने मे हम कोई धमकी नही दे रहे है। सत्याग्रह तो आत्मशुद्धि का मार्ग है।

सत्य पहचानें

आपने जो दो शर्तें रखी है, वे नाकाफी है। सीलिग की बात ही खतरनाक है। हमे वह बात नही करनी चाहिए। आज वह बात सर्वमान्य हो गई है। मैंने कहा है कि मै सीलिग नही, 'रूफिग' चाहता हू। मै चाहता हू कि यह सिद्धात कबूल करो कि हर परिवार को पाच एकड भूमि मिले और फिर जो बचती है, उसका कुछ भी करो। कुछ लोग कहते है कि आपके कहने के मुताबिक 'रूफिग' किया जाय तो वह इतना नीचा होगा कि जिसके कारण झुककर अदर जाना पडेगा। मैंने कहा, कोई हर्ज नही। हमे दिल्ली की नही, ग्राम की "सीलिग" चाहिए। तीस एकड का सीलिग होगा, तो कोई भी जमीन बेजमीन को नही मिलेगी। जमीन वाले लोग आपस मे ही अपने परिवार के लोगो मे जमीन बाट लेगे। तेलगाना मे भी सीलिग की बात चली, तो लोगो ने यही किया। वहा तो दो सौ एकड का सीलिग करने की बात थी। छोटा सीलिग रखो, जैसे तीस एकड का तो बहुत मुआवजा देना पडता है। बिना मुआवजे के आज जमीन छीनी नही जा सकती। और बडा सीलिग रखो तो कोई काम का नही। इसलिए हम तो चाहते है कि गावो की सारी जमीन गावो की ही हो जाय। अधिक-से-अधिक तिगुनी जमीन रखने की बात चली थी। लेकिन अगर सबको पूरा खाना नही मिला है। तो किसी को तीन गुना खाने का हक क्यो दे? कोई भी एक मनुष्य दूसरे मनुष्य से तीन गुना काश्त नही कर सकता, तो फिर तीन गुना जमीन रखने का हकदार वह कैसे बन सकता है? इसीलिए इस सारी चर्चा मे कोई सार मै नही पाता हू। हमें बुनियादी बातो पर सोचना चाहिए। हम चाहते है कि गाव की जमीन गाव की हो। क्या सरकार कानून से यह

कर सकती है ? उसके बगैर हमारा काम नही होगा, ऐसी माग आपने अपने प्रस्ताव में नही की है, न आप कर सकते है। सीलिग बनाने से क्या होगा ? आज जो बडे लूटनेवाले है, उनके बदले में छोटे लूटने वाले पैदा होगे। मतलब यह है कि लूटनेवालो की जमात मे वृद्धि होगी।

महान कार्य

हमने पाच करोड की बात की है। लेकिन अभी इस साल तो हमे पच्चीस लाख एकड करने है। पर जमीन बाटने से ही काम नही होता है। हमें हर गाव मे एक सर्वोदय-परिवार बसाना है। यह सारा इतना विशाल रचनात्मक कार्य हो रहा है कि इसके सामने सारे कम्यूनिटी प्रोजेक्ट्स फीके पडते है। हमारी हालत ऐसी होनी चाहिए कि चाहे जितने जागतिक युद्ध हो, हमारे काम तो चलते ही रहेगे, ऐसी शक्ति हममे पैदा होनी चाहिए। वह जन-शक्ति है। हमे पीलीभीत मे साढे सात हजार एकड जमीन मिली है। 'सर्व-सेवा-सघ' क्या वहा काम न करते हुए दूसरी जगह करेगा ? जैसे हमारे दस-पाच दूसरे काम चलते है, उसके साथ-साथ यह भी चलेगा, ऐसी बात नही है। या तो भूदान-कार्य ही चलेगा, या कुछ भी नही चलेगा। इसलिए हमारे सब सघो को इस काम मे कूद पडना चाहिए। हमे सरकार का पैसा नही चाहिए। पैसे का कोई सवाल नही है। और सत्ता, याने जन-शक्ति तो हमारे पास पडी है। लेकिन अगर सरकार, जहा जनता की सरकार है वहा, दड-शक्ति से जमीन का बटवारा करेगी, तो वह अहिंसा का काम होगा, हिंसा का नही।

खादी-बोर्ड बनाम मूल विचार

यह जो सरकार का खादी-बोर्ड वगैरा बना है, उसमें जमीन-आसमान का अतर है। खादी मे आज जो नुकसान हो रहा है, उसे बचाने का वह काम है। आज हमारी खादी बिकती नही है। उसे सरकार कुछ बढावा देने की सोच रही है। इसका मतलब यह है कि जिस काम के प्रति हमारे मन मे

अरुचि है, उसको बीस गुना चलाने की वह योजना है। हमारा खादी का जो मूल विचार है। उससे उसका कोई ताल्लुक नही है।

इस समय पडित नेहरू आये थे। बडे प्रेम से बोले। मैंने सब सुन लिया। मैंने उनसे कहा कि 'तीन सौ गाव की एक योजना होनी चाहिए, यह किसने ने बताया? एक गाव की ही योजना क्यो नही होनी चाहिए। हा, मै मानता हू कि चर्मालय वगैरह कुछ ऐसे काम है, जिनके लिए दस-पाच गावो का, और कुछ कामो के लिए दो-तीन सौ गावो का सहयोग चाहिए।" पडितजी ने मेरे विचारो के साथ, जितना मानसिक मेल वे बिठा सकते थे, बिठाने की कोशिश की। वे उत्तम पुरुष है।

सरकार की अपेक्षा

पिछली बार जब मै दिल्ली गया था, जैसा कि मेरा रिवाज नही है, याने नाहक परोपकार के लिए गया था। मैंने शरणार्थियो के काम मे छ महीने बिताये। अपनी जिन्दगी के छ माह निष्काम भाव से दे दिये, ऐसा मैंने सोचा। पहले पद्रह-बीस दिनो मे ही मैंने देख लिया कि हमारे सहयोग का बहुत परिणाम नही होगा। उस काम का कोई खास उपयोग भी नही हुआ। हा, एक बडी बात हुई कि मुझे मेव लोगो मे काम करने का मौका मिला। उसका बडा लाभ यह हुआ कि सारे मुसलमानो की सहानुभूति मुझे मिली। लेकिन उस समय शरणार्थियो मे कुछ काम नही हो सका। हम पुराने अनुभवो मे अपने को बाधना नही चाहते। परतु सरकार के साथ सहयोग करके अधिक शक्ति पैदा होती है, यह एक आभास है। बात तो यह है कि सरकार ही हमारी शक्ति की इच्छुक है, इसलिए वह चाहती है कि हम ही उसको शक्ति दे। हमें अपने ही पुरुषार्थो मे काम करना चाहिए। सरकार से तो कौडी की भी मदद नही लेनी चाहिए। वह जनता की सरकार है। उसके पास जो पैसा है, वह जनता का है। नियोजन मे हमे यही सत्ता चाहिए कि गाववालो को यह निर्णय करने का हक हो कि गाव में किस माल को आने दे और किसको नही। मैंने सुझाया है कि जिस तरह यह उसूल माना जाता

है कि पढना-लिखना जाननेवाला ही शिक्षित है और सरकार का यह कर्तव्य है कि हरेक नागरिक की तालीम का प्रबन्ध हो, उसी तरह हिन्दुस्तान के हर नागरिक को उत्तम सूत कातना आना चाहिए। जैसे तालीम के बारे मे सरकार का और नागरिको का कर्तव्य है, वैसे ही कातने के बारे मे भी है। जब मैंने पडितजी को यह बतलाया तो उन्होने कहा कि सब कातेगे तो उसके उपयोग की ओर भी ध्यान देना होगा। मैंने कहा, आपको पढाई मे भी यही बात आती है। अत अगर देश कातना नही जानता है, तो देश खतरे मे है ।

एक भाई को कुछ भास हुआ-सा दीखता है कि मुझमे कुछ परिवर्तन हुआ है। वास्तव में कोई परिवर्तन नही हुआ है । पाबदी की जो मदद मैंने सरकार से चाही है, वह अखिल भारत के लिए चाही है। तीन सौ गावो मे पाबदी लगाने की माग करना ही कृत्रिम बात है । उससे हम नाहक हिंसा-शक्ति का उपयोग करते हैं । आज तो हालत ऐसी है कि जहा घानी चलती है, वहा मिले खोली जाती है। मिल खोलना नागरिक स्वातत्र्य माना जाता है। इस तरह मार्ग मे जो रुकावटे आती है, उन्हे नही हटाते है, और फिर कहते है कि सबको काम मिलना चाहिए। जिस जरिये से सबको काम मिलता है, उसीको खत्म होने देते हैं। आप लोग छोटे क्षेत्र के लिए पाबदी लगाने की माग क्यो करते हैं ? सारे हिंदुस्तान के लिए क्यो नही करते ? आप तो चाहते है न कि सारे हिंदुस्तान का भला हो ?

हम ऐसी माग नही करते कि सरकार कुछ पाबदी लगाये। पर यह चाहते है कि जहा गाव के लोग वैसी माग करते है, वहा उनकी इच्छा के विरुद्ध माल नहीं आना चाहिए। हमारी यही मांग है कि सरकार उसूल के तौर पर यह कबूल करे। अगर सारे हिंदुस्तान के लिए कबूल करना उनके लिए सभव नही है तो एक ही क्षेत्र मे लागू करना कानून के खिलाफ होगा ।

एक बात ध्यान मे रखना चाहिए कि मैं कोई बात बताऊ और आप

उसे मान ले, यह मेरे सिद्धात के खिलाफ है। मै किसी का आदेश मानने के लिए तैयार नही हू और न मै चाहता हू कि मेरा आदेश माने।

दो आक्षेप

जो कच्चा माल गाव मे पैदा होता है, उसके पक्के माल की अगर गाव को जरूरत हो तो उसका पक्का माल वही पर बनना चाहिए, यह एक उसूल है। उसके विरुद्ध यह हो रहा है कि बाहर का माल गाव मे आता है, जिसे 'खुला बाजार' कहा जाता है और गाव उसे रोक नही सकता। यह हालत है। और फिर गावो को कहे कि आप अपने पैर पर खडे हो जाइये। यह कैसी बात है ? इससे तो ग्राम-राज्य के सिद्धात पर ही आघात होता है। बाहर की चीजे रोकने की शक्ति गाव मे होनी चाहिए। यह एक मामूली उसूल है। पर आज सरकार की एक कल्पना बन गई है। सरकार की बडी सत्ता मानी जाती है और गाव की छोटी सत्ता, याने झाडू लगाने का स्वातन्त्र्य गाव को है। पर जिस चीज की मिल खडी हो सकती है, उसकी मिल खडी करना एक बुनियादी हक माना जाता है। अगर सरकार अखिल भारतीय क्षेत्र मे हमारा उसूल नही मानती, तो छोटे क्षेत्र मे मानना उसके लिए कठिन है। अगर सरकार वैसी करेगी तो वह बात 'फेडरल कोर्ट' मे जावेगी और वहा सरकार नही टिकेगी। पर अगर सरकार उसूल की बात मान्य करती है, तो उसके लिए वह आसान है। चाहे जिस गाव की माग हो, फिर वह आपके चुने हुए क्षेत्र के गाव हो या उसके बाहर के, वह सरकार को माननी चाहिए। सारे देश के लिए दूसरी बात लागू होती हो और आपके क्षेत्र के लिए खास बात ही लागू हो, यह कैसे हो सकता है ? तो मेरे दो आक्षेप है। एक, सीलिग से हमारा कोई काम होने वाला नही। और दूसरा, बाहर के माल पर पाबदी लगाने का गाव को हक होना चाहिए। हमें तीन सौ ही गाव को क्षेत्र नही मानना चाहिए। जहा भी हमारे कार्यकर्ता बैठेंगे, वहा वे काम करेंगे।

सर्व-सेवा सघ की बैठक में भाषण।
चाडिल, ६ मार्च १९५३

५

कड़ी कसौटी का वर्ष

पिछले साल सेवापुरी मे पच्चीस लाख का सकल्प किया गया। तबतक कुल एक लाख एकड जमीन हाथ मे आई थी। पहले तो एक साल मे सकल्प पूरा करने की बात थी। मैंने ही एक के बजाय दो साल रखवाये। आज जो हवा पैदा हो गई है, उसको और अबतक जो काम हुआ है, उसे ध्यान मे रखते हुए यदि हम अगले सम्मेलन तक पच्चीस लाख पूरे नही कर सके, तो यह कार्यक्रम हमने छोड दिया, ऐसा ही समझना होगा। समय दौड रहा है। वह हमारे लिए रुका नही रहेगा। १९५७ तक यह मसला हल हो जाना चाहिए। प्राप्ति और वितरण का झमेला है। उसमे हम पड जाय और प्राप्ति रुक जाय तो पच्चीस लाख की बात नही बनी, ऐसा न हो। हम यह कार्यक्रम आग्रह से करते होते, तो अहकारी साबित होते। यह अहकार का कार्यक्रम होता तो इसमे यश मिलने पर भी हम गिरते। अपयश मिलता, तब तो गिरते ही। लेकिन यह अहकार का कार्यक्रम नहीं है। लोगो को इसकी आवश्यकता है, वे इसके लिए तैयार है।

पहला काम : प्राप्ति

गया जिले की मिसाल आपके सामने है। वहा मैंने एक लाख का जप शुरू कर दिया। यह सकल्प मेरा नही है। वह समय की आकाक्षा है। इसीलिए गया जिले में इतना काम हो सका है। हमारे लोगो का यह स्वभाव है, कार्यकर्ताओं का भी स्वभाव है कि वे पर्व और त्योहार के दिन ही धर्माचरण करते है। एकादशी, शिवरात्रि, रामनवमी के दिन परमार्थ का आचरण किया, धर्म का काम किया—बस धर्म खतम। इसी प्रकार २६ जनवरी, २ अक्तूबर, गाधी-दिन—जैसे राष्ट्रीय पर्वो के अवसर पर लोग

तो हमको सार्वजनिक काम में से खत्म होना होगा। पुराने लोगो ने कहा है, "अनारभो हि कार्याणाम् प्रथम वुद्धि लक्षणम्, "—काम शुरू ही न करना नवर एक की अक्लमदी है। वह तो हमने नही दिखाई और काम शुरू कर दिया। वुद्धिमानो का दूसरा लक्षण है—"प्रारब्धस्य अन्तगमनम् द्वितीय वुद्धिलक्षणम्," जो काम शुरू किया हो, उसे पूरा करना। हम कम-से-कम यह नवर दो की अक्ल वतायें।

स्वराज्य का मामूली-सा आन्दोलन था। गाधीजी कहते थे कि हम स्वराज्य तो एक दिन में ले सकते है। अगर सव एक दिन के लिए हडताल कर दे तो स्वराज्य हमारे हाथ में है। परतु यह तो भावरूप (पॉजिटिव) आर्थिक क्राति का कार्यक्रम है। स्वराज्य के लिए हमने जितना त्याग किया, उसके मुकावले में तो हमको इसमें वहुत कम करना पड रहा है। केवल जरा से सातत्य की जरूरत है। अगर यह सुधार का कार्यक्रम होता तो मै रद्दी जमीन क्यो लेता? मै तो पहाड-पत्थर भी ले लेता हू। शहावादी पत्थर मिले, तो वे भी ले लिये। उत्तर प्रदेश का कोटा करीव-करीव पूरा हो गया है। वहा का वितरण जून तक पूरा हो जाना चाहिए। लेकिन उत्तर प्रदेश यह न समझे कि हम कृतकार्य हो गये।

हमसे पूछते ै, निकम्मी जमीन आप क्यो ले लेते है? हम कहते है, निकम्मी जमीन रखकर क्या करते हो? हमें दे दो। अभी हमको सुनाया गया कि राजस्थान मे अच्छी जमीन ही नही है तो आपको क्या दे? सारा राजस्थान ही हमको समर्पण क्यो नही कर देते?

मै आप से कहता हू कि यह धार्मिक व्रत नही, राजनैतिक व्रत है। ऐसा काम उठा लेना कोई हसी-मजाक का काम नही है। समाज के इतने लोग हमारी वात को सुन चुके है। एक वातावरण वन गया है। अगर हम अपना सकल्प पूरा नही करते है तो यह आप निश्चित समझ लीजिये कि सार्वजनिक काम मे हम मुक्त है।

'सर्व-सेवा-सघ' की वैठक में भाषण।
चांडिल, ६ मार्च, १९५३

६

विचार-भेद हो, आचार-भेद नहीं

मैंने कहा है कि जनता के सामने जो कार्यक्रम रखा जाय, वह जहा तक हो सकता है, सर्वमान्य हो। जिन विषयो मे मतभेद हो, उनपर चितन जारी रहना चाहिए, विचार-विनिमय, चर्चा-वहस चलनी चाहिए। परन्तु प्रत्यक्ष कर्मयोग में उतना ही अश आना चाहिए, जितने अश पर सवको, यानी सव सज्जनो की एक राय हो। सव चिन्तनशील नेताओ की एकराय हो, यह विचार धर्म-परिवर्तन मे किस तरह मान्य हुआ है, उसका थोडा उल्लेख मै कर चुका हू।

मिसाल के तौर पर मैं हिन्दू धर्म को लेता हू, क्योकि मुझे उसकी विशेष जानकारी है। हिन्दू धर्म में असख्य विचार-भेद मौजूद हैं। उनपर चर्चाए चलती हैं। कुछ वाते तो ऐसी है, जिन पर शायद कभी भी निर्णय नही होगा। इसपर भी कुछ ही आचार धर्म-मान्य किये गए है, और उसीको धर्म कहते हैं। जैसे गो-सेवा, आहार-शुद्धि, अहिंसा इत्यादि का परिपालन, उपासना—चाहे इनके प्रकार मे भेद हो, पर ध्यान-युक्त उपासना का महत्त्व, उपवास आदि साधनो की मान्यता आदि कुछ वस्तुए ऐसी है कि अन्य विचारो मे मत-भेद होते हुए भी सवने उन्हे मान्य किया है। जव इस तरह होता है, तभी आचार की प्रतिष्ठा होती है। यानी स्थिर वुद्धि मे निष्ठा और कर्मयोग पर मनुष्य पहुचता है, नही तो शाखाए तो अनन्त है, पर कर्मयोग मे परिणत होती हैं उतनी ही, जितनी कि सर्ववुद्धि ने सर्व-मान्य हो।

वहुमति-अल्पमति का प्रश्न नहीं

रचनात्मक कार्यकर्त्ताओ मे और नेताओ मे प्रत्यक्ष कार्य के विषय मे

बुद्धि-भेद नही होना चाहिए। अब हम 'सर्व-सेवा-संघ' को प्रधान स्थान देने जा रहे हैं। यानी दूसरे संघ उसमें एक तरह से विलीन होने जा रहे हैं। तो इस बात का महत्त्व है कि जिन कार्यक्रमो पर सबकी एक राय हो, वही कार्य-क्रम प्रस्ताव रूप में मान्य किया जाय और जिनमें मतभेद है, उनपर चिन्तन जारी रहे। बहुत दफा यह शका उठाई जाती है कि इसमें तो एकाध मनुष्य भी अडगा लगायें तो काम नही बनेगा। लेकिन यह अडगे की बात तो जहा बहु-सख्या अल्प-सख्या मानी जाती हैं, वही पर होती हैं। पर जहा पर हम यह उसूल मानते है कि सबकी एकराय होनी चाहिए, वहा उसका स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि अडगा लगाने की वृत्ति किसीमें नही होती। यह एक मानस-शास्त्रीय सिद्धान्त है।

हमारी बुनियाद सद्भाव पर

ईसा ने एक बहुत सुन्दर वाक्य में समझाया है कि "Agree with thou adversary quickly"—तुमसे मतभेद रखनेवाले के साथ फौरन एकमत हो जाओ। यह जो 'फौरन' शब्द है, वह बहुत महत्त्व का है। यानी सामनेवाला जो सुझाव पेश करता है, या हम जो सुझाव पेश करते हैं, उसके मूल में कुछ विचार होते हैं। विचार एक दृष्टि से एक रूप लेता है और दूसरी दृष्टि मे दूसरा रूप लेता है। दृष्टि-भेद से उसमें फर्क पडता है। इसे पहचान कर जो समान अश दिखेगा, उसे साररूपेण ग्रहण करने की शक्ति हममे होनी चाहिए। जितने भी हम सब विचार-विमर्श में हिस्सा लेने वाले हैं और जिनके विचार का परिणाम प्रस्ताव पर होनेवाला है, उनको एक-दूसरे के लिए ऐसा सहज विश्वास चाहिए, जिसे सिद्ध करने की जरूरत नही होनी चाहिए। और जो भी विचार किया जा रहा है, वह सद्हेतुमूलक है, यह विश्वास मन मे न रहा और सामने वाले के बारे में शका रही तो हमारी बात नही बन सकती। अगर यह शका हमारे मन में न रहे, तो सद्हेतु की कल्पना करते हुए हम फौरन दूसरे के साथ एकरूप होने की कोशिश कर सकते है। वह दो कदम हमारी तरफ बढ सकता है,

और हम भी उसकी तरफ बढ सकते है, इस तरह हम एक-दूसरे की तरफ आ सकते है। बुनियादी सद्भाव पर हमारी श्रद्धा बिना किसी परीक्षण के, बिना किसी सबूत के होनी चाहिए। अगर वह हो तो हमारा सारा काम एकरस हो सकता है। इससे निर्णय शीघ्र नही होगे, ऐसा एक आक्षेप उठाया जाता है। परतु कभी-कभी निर्णय शीघ्र न होना भी जरूरी हो जाता है। जहा उतनी तीव्र परिस्थिति नही होगी, वहा कर्म शीघ्र न होगे तो गुण ही है। इस दृष्टि से सोचते हुए इसमें एकमत से काम करने का निश्चय हम करते है, तो उसमे कुछ दोष नही है।

अवयव का पोषण शरीर का भी पोषण

अब 'सर्व-सेवा-सघ' बना है तो कई समस्याए खडी होती है। सस्थाओ का क्या होगा, सस्थाओ के पास जो अलग-अलग पैसा है, उसका क्या होगा? ये सवाल उठते है। लेकिन मुझे लगता है कि ये सब सवाल बिलकुल ही गौण है। विचार का सशोधन जो चलेगा, वह चलता ही रहेगा, पर बाकी कोई भेद नही रहेगा। हिंदुस्तान मे हमारे जो भी केन्द्र बनेगे, वे सर्व-सेवा-सघ के केन्द्र होग और पैसा जो अलग-अलग नाम से इकट्ठा किया होगा, वह सब वहा डूब जायगा, जैसे नदी समुद्र मे विलीन होती है। जहा एक परिपूर्ण काम है, वहा सब काम उसमें आ जाते है। मै भोजन करता हू, तो यह नही देखता कि उसका कितना अश हृदय के पोषण मे गया, कितना पाव के पोषण मे गया और कितना हाथ के पोषण मे गया। ऐसा नही हो सकता कि जो कुछ मै खाता हू, उससे ही सारे शरीर को पोषण मिल जाता है। लेकिन अगर मैने ऐसा कुछ खाया है, जैसे आवला, जिससे कि आख को विशेष पोषण मिलता है, या स्नेह, जिससे स्नायुओ को खास पोषण मिलता है, तो भी कुल मिलाकर जो खाता हू, उसका सारे शरीर को पोषण मिलता ही है। इस तरह जो भी पैसा आया है, वह सबके लिए है। मानो खादी के लिए साठ लाख और तेल-घानी के लिए पचास करोड मिला है, किसी ने दान दिया है। तो क्या तेल-घानी के काम को खादी से

अधिक महत्त्व देना चाहिए ? यह नही हो सकता। हमारे मन में किस काम को कितना महत्त्व देना है, इसका नाप होगा, और इसीसे हम काम करेंगे। इसमें ट्रस्ट का भग होगा, ऐसा डर—विचार—रखने की कोई जरूरत नही है। अगर हम अलग-अलग रहे तो ऐसी शका की जा सकती है, पर जहा एकरूप हो गये कि जैसे पूर्वजन्म के भेद लागू नहीं होते, ये भी नही लागू होगे। यह एक तारतम्य की बात है।

अलग-अलग होने पर भी एक

जिस काम के लिए हमें पैसा मिलता है, वह भी आज हम ठीक से खर्च कर रहे है, ऐसी बात नही है। हम पैसा बैंक में रखते है। तो बैंक का पैसा दूसरे कामो में ही खर्च होता है, जो कि हमारे विचार के विरोधी काम है। तो इससे बेहतर है कि वह पैसा हमारे ही काम में खर्च हो। जिस प्रमाण में खर्च करना चाहिए, उसी प्रमाण में हम खर्च करेंगे। मानो मुझे खादी के लिए दो लाख मिला है और तेल-घानी के लिए दो करोड, तो तेलघानी के लिए अधिक पैसा मिलने पर भी हम वह पैसा बिना उसे समझाये नही लेंगे, क्योंकि यह कोष उस जमाने मे इकट्ठा हुआ, जब अलग-अलग फड इकट्ठा करते थे। लेकिन अलग-अलग इकट्ठा हुए हो, इसलिए हम आज भी अलग खर्च करे, यह ठीक नही, जब कि जमाना बदल गया है। जैसे पुराने मन्दिरो का हाल है। आज हम हरिजनो को उन मन्दिर में जाने देते है, तो ट्रस्ट का भग नही होता। इसलिए आज बाकी सब विचार गौण समझने चाहिए और सबको 'सर्व-सेवा-सघ' मे दाखिल हो जाना चाहिए। परिस्थिति के अनुसार किसी जगह कुछ काम अधिक होगा, पर हम उसी प्रमाण में हर चीज का विकास करेंगे, जिस प्रमाण में हम उसे उचित मानेंगे। बाह केवल बाह या पैर ही मजबूत नही बनाना है। हम ऐसा एकागी विकास नही करना चाहते हैं। हम हर अग का नाप बिठायगे और उसके अनुसार काम करेंगे। किसी जगह एक काम अधिक भी हो सकता है, परन्तु काम होगा सर्व-सेवा-सघ का और उसका नाम भी होगा। हर जिले मे ऐसा एक

केन्द्र बने तो बहुत सहूलियत होगी ।

आचार मे बुद्धि-भेद निर्माण हुआ तो समाज का भला नही होगा, कर्म-योग नही चलेगा, प्रगति नही होगी । विचार-भेद चाहिए, विचार-विमर्श और चिन्तन चाहिए, विचार-शोधन भी होना चाहिए । इसलिए विचार-भेद जरूरी है । उसके बगैर विचार-शोधन, विचार-मथन नही होगा । इसलिए हम स्वतत्र रूप से सोचेगे । परन्तु जहा आचार का सवाल आयगा, वहा जिस पर एकराय होगी, उसीको धर्म मानेंगे और उसीके अनुसार चलेगे ।

प्रार्थना-प्रवचन
चांडिल, १० मार्च ५३

विहार के मंत्री भी इसके अनुकूल हैं, यह एक प्राप्ति है। लेकिन जयप्रकाशजी के मन में निःसन्देहता पैदा हुई, यह एक बहुत बड़ी प्राप्ति है। अगर हम नम्रतापूर्वक काम करते जायंगे, तो ऐसी ही प्राप्ति होगी और सब सज्जनों का सहयोग हम हासिल करेंगे।

प्रार्थना-प्रवचन,
चाडिल, ११ मार्च ५३

८

सर्वोदय-सेवकों से

जब जहा कोई एक बडा पत्थर उठाना होता है, वहा सारे लोग एक साथ ताकत लगाते है। एक दो, तीन कहते है और एक क्षण मे सब एक साथ जोर लगाते है। अगर वैसा न करे तो वह पत्थर जगह नही छोडता। तो ऐसा ही यह कार्य है, जिसमे हमें एक साथ और एक समय में अपनी ताकत लगानी है। मै अपनी ताकत लगा रहा हू। दो महीने बाद आप लगाये, फिर चार महीने बाद कोई और लगाये, अपनी-अपनी फुरसत मे इस तरह काम नही होगा। इस तरह के कामो मे एक निश्चित समय होना जरूरी है, लश्करी भाषा में उसे 'जीरो आवर' (शून्य क्षण) कहते है, पर उस वक्त हम फुरसत देखें, सहूलियत देखें तो काम नही बनता। नेपोलियन ने आठ हजार का लश्कर लेकर आस्ट्रिया पर चढाई कर दी और एक निश्चित समय पर धावा करने की उसने अपनी सेना को आज्ञा दी, और इस तरह विजय प्राप्त की। यह एक लडाई का मैने जिक्र किया। मुझे शौक था इतिहास का, अध्ययन करते-करते लडाई का अध्ययन करने का। बक्सर की लडाई मे समय पर सामान और मदद न पहुचने से पराजय हुई। तो यह एक हम लोगो मे न्यूनता है—व्यवस्थितता का अभाव।

विशिष्ट 'क्षण' का महत्त्व

कुमारप्पाजी ने कहा कि "हमारी संस्कृति मे यह विशेषता है कि व्यक्तिगत विकास की ओर हमारा ध्यान रहना चाहिए।" पर इसका मतलब यह नही कि हम सामूहिक कार्य में भाग ही न लें। इसलिए यह मैंने मिसाल दी बडा पत्थर उठाने की और यह बात तुकडोजी महाराज को

यदि पार्लमेंट के सदस्य कहें कि हमारा थोडा-सा काम पडा है, उसे करके आयगे, काश्तकार कहे कि थोडी मोहलत दीजिये, तो ऐसे से क्या काम हो सकता है ? इस तरह से हमारा काम नही होगा।

श्रद्धा की शक्ति

गाधीजी रात-दिन प्रार्थना करते थे। वे कहते थे कि मेरी परीक्षा तो तब होगी जब मैं मरूगा, और वही बात हुई भी। उनका हृदय तो राम मे रमा हुआ था। गोली लगते ही उनके मुह से "हे राम" निकल गया। मानव-स्वतन्त्रता, मुक्ति की वासना और सत्सग, ये तीनो हमे मिले। अन्दर से भक्ति और भाव होने चाहिए। आपने छोटी-छोटी लडकियो के मुह से सुना कि हमने दाताओ के रूप मे भगवान् के दर्शन किये। हम उनके पास जाते थे और वे ना नही कह सकते थे। उनके मुह से भगवान् बोलते थे। शाताबाई नारुलकर गई और पन्द्रह दिन मे दो हजार एकड जमीन ले आई। वह सामने हरि रूप है, यह मानकर लोगो को श्रद्धा से समझाती थी और जमीन मागती थी। ऐसी श्रद्धा से हमें काम करना है और ऐसी श्रद्धा से हम महान् शक्ति खडी कर सकते हैं।

न आने से पछताओगे

केवल एक व्यक्तिगत रूप से मैं अपने को समर्थ नही पाता। अगर तेलगाना में मुझे इशारा न मिला होता तो मुझसे यह काम न होता। वहा हरिजनो ने माग की और देनेवाले ने भूमि दान मे दी। अगर देनेवाले ने जमीन न दी होती तो मेरे हाथ से यह काम न होता। तो मैं यह नही मानता कि मेरी शक्ति से यह काम होनेवाला है, बल्कि यह सबका काम है। मैं चाहता हू कि आप लोगो की मदद मुझे मिलनी चाहिए। अब मेरे शरीर का भरोसा नही है। मैं तो प्रतिक्षण तैयार हू, यद्यपि मैं ऐसा चाहता नही हू। हम तो रोज प्रार्थना करते है, 'जिजीविषेच्छतंसमा चरैवेति चरैवेति'-चलना है तो चलना ही है, गिरेंगे तो गिरेंगे। उसमे मानसिक समाधान बहुत होता है। गाधीजी के नाम मे, सर्वोदय के नाम मे, मैं आपको कहता हू कि मेरी

मदद के लिए दौडे आओ। अगर दौडे नही आओगे तो आप ही पछताओगे।

मै गाधीजी से अक्सर मिलता कम था। लोग कहते थे कि "गाधीजी ने ऐसा कहा और वैसा कहा, पर हमे जचता नही है।" तो मै उनसे कहता था कि या तो आप योजना दो और गाधीजी उसका अमल करे। या गाधीजी योजना करे और आप उस पर अमल करे। लेकिन आपमें योजना करने की अकल नही है। और गाधीजी के शरीर में आपकी योजना पर अमल करने की ताकत नही है। यह अकलमदी की वात नही हैं कि जो इतनी वडी भारी पूजी हमारे पास पडी है, उसका उपयोग हम न करे और उनको मदद भी न दे। जहा आदमी के चिंतन की वात आती है, वहा मै सोचूगा, पर जहा कूद पडने की वात है, वहा मै फौरन कूद पडूगा।

एक वार गाधीजी को ख्याल हुआ कि सन् ४२ में उपवास की शृखला चले। उन्होने कहा था कि जव मै जेल जाऊगा तो इशारा करूगा और मै उपवास करूगा, तो सव लोग उपवास शुरू कर दे। लोग घवरा गये और कहने लगे कि उपवास तो अधिकारी ही कर सकते है। गाधीजी से कहा कि आपको उपवास हर हालत मे नही करना चाहिए। वापू ने मुझे वुलाया और कहा कि ऐसा मै सोचता हू कि अन्तिम अनशन मै करू और सव लोग भी करे, तो क्या यह हो सकता है? तुम इसमे क्या सलाह देते हो? मैंने उत्तर दिया कि जो काम रामजी कर सकता है, वह हनुमान भी कर सकता है। राम वुद्धि से करता है, हनूमान श्रद्धा से कर सकता है। जिसमें श्रद्धा है, वह निष्ठा से इस काम को कर सकता है। इसलिए सेनापति आज्ञा कर सकता है और जिसमे श्रद्धा है, वह उसे पूरा कर सकता है। उन्होने फिर कहा कि कुछ सोचना है तो सोचो, पर मैने कहा कि मुझे कुछ सोचना नही है और मै उठ कर चला गया। उस पर से महादेवभाई को क्लेश हुआ, क्योकि मैने गाधीजी को उपवास की इजाजत दे दी और मेरा ख़याल है कि इस वेदना में ही वे चले गये। जिस क्षण मेरे मुख से यह वात निकली, उन्होने सोचा कि यही एक शख्स था, जो वापू को परावृत कर सकता था। पर जव इसकी सम्मति मिल गई है तो दोनो वावा एकरूप हो गये।

९ अगस्त को बापू गिरफ्तार हो गये और सात-साढे सात बजे मुझे यह मालूम हुआ। तीन बजे मै गिरफ्तार हुआ। जेल में पहुचा। वहा मैंने जेलर से कहा कि जेल में आने के बाद हम आत्मा मे रहते है, जरूर शरीर का कुछ भी करे, पर इस मर्तबा आपका राज्य सारा नामजूर है, इसलिए हमारा उपवास शुरू हो रहा है। आज तो मैंने खाया है, इसलिए खाना नही है, पर कल से मेरा उपवास शुरू होगा। एक-डेढ घटे के बाद, कोई साढे पाच का समय होगा, सुपरिन्टेन्डेन्ट ने मुझे बुलाया और मै हाजिर हुआ। उन्होने मुझसे कहा कि आपकी मुलाकात है, पर आपको कुछ बोलना नही है। सामने बालुजकरजी को देखा। तब मैंने कहा कि सुनाओ। श्री बालुजकरजी ने सुनाया कि "बापू ने सदेश दिया है कि अभी आप उपवास न करे।" उनका विचार यह था कि फौरन उपवास न किया जाय, थोडा समय बीतने दे। उन्हे मालूम था कि जब मैंने उन्हे उपवास की सम्मति दी थी, तो मै भी उपवास करनेवाला ही था। यह कहानी मैंने इसलिए सुनाई कि मुझमें यह आदत नही थी कि नाहक तर्कशक्ति चलायें, उसकी बहस करते रहे और समय गवाये। यह बेकार बात है। मै मानता था कि बापू मेरे लिए बडी भारी पूजी थे तो यह कहने का मौका नही आना चाहिए कि बापू ने हमे एक मार्ग बताया और हम उसके लिए समय न दे सके। पर हम सदा तैयार है, ऐसा कहना चाहिए।

एक दिन बापू ने मुझे बुलाया और कहा कि तुझे काम तो बहुत होगा, पर कुछ भी हो, व्यक्तिगत सत्याग्रह के लिए तू तैयार हो सकता है क्या ? मैंने कहा कि यमराज की आज्ञा और आपकी आज्ञा समान है। इतना ही कहना बस है। यदि आप आज्ञा देते है तो पवनार जाता हू, नही तो यही बैठा हू।

ऐसे ही सोच कर हम सर्वोदय समाज के कार्य में लग जायें। अब स्वतत्र विचार को न रखे, यही मै आपको कहूगा। आप अधिक छानबीन मे न रहे, यह मैंने पहली बात कही, और दूसरी बात यह कि जब मौका आवे, हम सबकुछ छोड देने के लिए तैयार हो जाय। ऐसा जब करेगे और सोचेगे तो सर्वोदय का प्रत्यक्ष दर्शन होगा।

विनोवा-साहित्य

विनोवा के विचार (दो भाग)—विनोवाजी के निवन्धो व व्याख्यानो का महत्वपूर्ण सग्रह। प्रति भाग १॥)

गीता-प्रवचन—गीता के प्रत्येक अध्याय का वडा ही सरल, सुवोध शैली में विवेचन। अजिल्द १), सजिल्द १॥)

शान्ति-यात्रा—गाधीजी के देहावसान के वाद अनेक स्थानो मे दिये गए विनोवाजी के प्रवचन। सजिल्द ३॥)

स्थितप्रज्ञ-दर्शन—स्थितप्रज्ञ के लक्षणो की व्याख्या। २।)

ईशावास्यवृत्ति—ईशोपनिपद् की विस्तृत टीका। १)

ईशावास्योपनिषद्—मूल श्लोको सहित ईशोपनिपद् का सरल अनुवाद। =)

सर्वोदय-विचार—सर्वोदय-विषयक लेखो व प्रवचनो का सग्रह। १=)

स्वराज्य-शास्त्र—प्रश्नोत्तर के रूप में विनोवाजी द्वारा स्वराज्य की परिभाषा, अहिंसात्मक राज्य-पद्धति एव आदर्श राज्य-व्यवस्था का विवेचन। १)

भू-दान-यज्ञ—देश के भूमिहीनो की दुर्दशा से प्रभावित होकर भूमि के समवितरणार्थ दिये गये मूल्यवान प्रवचन। ।)

राजघाट की सनिधि में—भूदान-यज्ञ के सिलसिले में दिल्ली मे दिये गये विनोवाजी के प्रवचन। ॥)

गाधीजी को श्रद्धांजलि—गाधीजी के प्रति विनोवाजी की सर्वोत्तम श्रद्धाजलि। ।=)

जीवन और शिक्षण—युवकोपयोगी लेखो तथा भाषणो का सग्रह। २)

सर्वोदय का घोषणापत्र—चाडिल-सर्वोदय-सम्मेलन मे दिये गए विनोवाजी के महत्त्वपूर्ण भाषण ।)

९ अगस्त को बापू गिरफ्तार हो गये और सात-साढे सात बजे मुझे यह मालूम हुआ। तीन बजे मै गिरफ्तार हुआ। जेल में पहुचा। वहा मैने जेलर से कहा कि जेल मे आने के बाद हम आत्मा में रहते है, जरूर शरीर का कुछ भी करे, पर इस मर्तबा आपका राज्य सारा नामजूर है, इसलिए हमारा उपवास शुरू हो रहा है। आज तो मैने खाया है, इसलिए खाना नही है, पर कल से मेरा उपवास शुरू होगा। एक-डेढ घटे के बाद, कोई साढे पाच का समय होगा, सुपरिन्टेन्डेन्ट ने मुझे बुलाया और मै हाजिर हुआ। उन्होने मुझसे कहा कि आपकी मुलाकात है, पर आपको कुछ बोलना नही है। सामने बालुजकरजी को देखा। तब मैने कहा कि सुनाओ। श्री बालुजकरजी ने सुनाया कि "बापू ने सदेश दिया है कि अभी आप उपवास न करे।" उनका विचार यह था कि फौरन उपवास न किया जाय, थोडा समय बीतने दे। उन्हे मालूम था कि जब मैने उन्हे उपवास की सम्मति दी थी, तो मै भी उपवास करनेवाला ही था। यह कहानी मैने इसलिए सुनाई कि मुझमें यह आदत नही थी कि नाहक तर्कशक्ति चलायें, उसकी बहस करते रहे और समय गवाये। यह बेकार बात है। मै मानता था कि बापू मेरे लिए बडी भारी पूजी थे तो यह कहने का मौका नही आना चाहिए कि बापू ने हमे एक मार्ग बताया और हम उसके लिए समय न दे सके। पर हम सदा तैयार है, ऐसा कहना चाहिए।

एक दिन बापू ने मुझे बुलाया और कहा कि तुझे काम तो बहुत होगा, पर कुछ भी हो, व्यक्तिगत सत्याग्रह के लिए तू तैयार हो सकता है क्या? मैने कहा कि यमराज की आज्ञा और आपकी आज्ञा समान है। इतना ही कहना बस है। यदि आप आज्ञा देते है तो पवनार जाता हू, नही तो यही बैठा हू।

ऐसे ही सोच कर हम सर्वोदय समाज के कार्य मे लग जायें। अब स्वतन्त्र विचार को न रखें, यही मै आपको कहूगा। आप अधिक छानबीन मे न रहे, यह मैने पहली बात कही, और दूसरी बात यह कि जब मौका आवे, हम सबकुछ छोड देने के लिए तैयार हो जाय। ऐसा जब करेंगे और सोचेंगे तो सर्वोदय का प्रत्यक्ष दर्शन होगा।

विनोबा-साहित्य

विनोबा के विचार (दो भाग)—विनोबाजी के निबन्धो व व्याख्यानो का महत्त्वपूर्ण सग्रह। प्रति भाग १॥)

गीता-प्रवचन—गीता के प्रत्येक अध्याय का बडा ही सरल, सुबोध शैली में विवेचन। अजिल्द १), सजिल्द १॥)

शान्ति-यात्रा—गाधीजी के देहावसान के बाद अनेक स्थानो में दिये गए विनोबाजी के प्रवचन। सजिल्द ३॥)

स्थितप्रज्ञ-दर्शन—स्थितप्रज्ञ के लक्षणो की व्याख्या। २।)

ईशावास्यवृत्ति—ईशोपनिषद् की विस्तृत टीका। १)

ईशावास्योपनिषद्—मूल श्लोको सहित ईशोपनिषद् का सरल अनुवाद। =)

सर्वोदय-विचार—सर्वोदय-विषयक लेखो व प्रवचनो का सग्रह। १=)

स्वराज्य-शास्त्र—प्रश्नोत्तर के रूप में विनोबाजी द्वारा स्वराज्य की परिभाषा, अहिंसात्मक राज्य-पद्धति एव आदर्श राज्य-व्यवस्था का विवेचन। १)

भू-दान-यज्ञ—देश के भूमिहीनो की दुर्दशा से प्रभावित होकर भूमि के समवितरणार्थ दिये गये मूल्यवान प्रवचन। ।)

राजघाट की सनिधि में—भूदान-यज्ञ के सिलसिले में दिल्ली में दिये गये विनोबाजी के प्रवचन। ।॥)

गांधीजी को श्रद्धाजलि—गाधीजी के प्रति विनोबाजी की सर्वोत्तम श्रद्धाजलि। ।=)

जीवन और शिक्षण—युवकोपयोगी लेखो तथा भाषणो का संग्रह। २)

सर्वोदय का घोषणापत्र—चाडिल-सर्वोदय-सम्मेलन मे दिये गए विनोबाजी के महत्त्वपूर्ण भाषण ।)

मझे

गाधी-साहित्य

प्रार्थना-प्रवचन (खड १,२)—वे सकलित प्रवचन जो गाधीजी ने दिल्ली की प्रार्थना-सभाओ मे दिये थे। ३), २॥)

गीता-माता—मूल पाठ के साथ-साथ अनासक्ति-योग, गीताबोध, गीता-प्रवेशिका, गीता-पदार्थ-कोप तथा गीता-सबधी लेखो का सकलन। ४)

पन्द्रह अगस्त के बाद—भारत के स्वतन्त्र होने के दिन से लेकर अन्तिम समय तक के गाधीजी के लेखो का सग्रह। अ० १॥), स० २)

धर्म-नीति—नीति-धर्म, मगल-प्रभात, सर्वोदय और आश्रमवासियो से, इन चार पुस्तको का सग्रह। अ० १॥), स० २)

दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास—दक्षिण अफ्रीका मे मानवीय अधिकारो के लिए किये गए अहिसात्मक सग्राम का विस्तृत इतिहास। ३॥)

मेरे समकालीन—समसामयिक नेताओ एव जनसेवको के गाधीजी द्वारा लिखे हुए मार्मिक सस्मरण। ५)

आत्मकथा—पढने मे उपन्यास-जैसी रोचक तथा शिक्षा व ज्ञान मे उपनिषदो की भाति पवित्र गाधीजी की आत्मकथा। ५)

गीता-बोध	॥)	एक सत्यवीर की कथा	।)
अनासक्ति-योग	१॥)	सक्षिप्त आत्मकथा	१॥)
ग्रामसेवा	।=)	हिन्द-स्वराज्य	॥।)
मगल-प्रभात	।=)	हृदय-मथन के पाच दिन	।)
सर्वोदय	।=)	बापू की सीख	॥)
नीति-धर्म	।=)	आज का विचार अजिल्द	।=)
आश्रमवासियो से	॥)	,, सजिल्द	॥=)
ब्रह्मचर्य	१)	गाधी-शिक्षा (तीन भाग)	१=)
राष्ट्र-वाणी	१)		

सस्ता साहित्य मण्डल

नई दिल्ली